शैक्षिक
संदर्भ
अंक-28,
10

संपादन:
राजेश खिंदरी
दीपक वर्मा
माधव केलकर
रश्मि पालीवाल
सी. एन. सुब्रह्मण्यम
हृदयकांत दीवान

वितरण:
महेश बसेड़िया

चित्रांकन:
वी. एम. भोंडे

सहयोग:
बृजेश सिंह
रामभरोस यादव
गजेन्द्र सिंह राठौर
संजय तिवारी
अनिल पटेल

शैक्षिक

संदर्भ

शिक्षा की द्वैमासिक पत्रिका
अंक-28, जुलाई-अगस्त 1999

संपादन एवं वितरण:
एकलव्य, कोठी बाज़ार
होशंगाबाद – 461 001
फोन: 07574 – 53518
ई-मेल: eklavyamp@vsnl. com

वार्षिक सदस्यता (6 अंक) : 50 रुपए
(ड्राफ्ट एकलव्य के नाम से बनवाएं)

मुखपृष्ठ: सम-बहुफलक प्रकृति में भी पाए जाते हैं। चतुष्फलक के आकार के सोने के प्राकृतिक क्रिस्टल। चतुष्फलक में चारों फलक समबाहु त्रिभुजों से बने होते हैं। ये क्रिस्टल लगभग पांच मि.मी. बड़े हैं और चेकोस्लोवाकिया में पाए गए। (सम-बहुफलकों के बारे में विस्तृत जानकारी पृष्ठ 23 पर।)। इस चित्र की एक और खासियत है – अगर आप इसे उलटाकर देखेंगे तो उभरे हुए क्रिस्टल की बजाए गड्ढे नज़र आएंगे।

पिछला आवरण: टिटेनियम ऑक्साइड का बेहद चमकदार क्रिस्टल। ये ऐसा दिखता है मानो कि दो पिरामिड आपस में जोड़ दिए गए हों।

इस अंक में निम्न किताबों से चित्र लिए गए हैं: ***ब्रिटिश एंड यूरोपियन इनसेक्टस:*** *वूल्फगेंग डायल; प्रकाशक: चैटो एंड विन्डस, लंदन।* ***फीयरफुल सिमेट्री:*** *इयान स्टीवर्ट एंड मार्टिन गोलुबिटस्की; प्रकाशक: पेंगुइन।* ***मिनरलॉजी:*** *मिलोवस्की एंड कोनोनोव; प्रकाशक: मीर पब्लिशर्स मास्को।* ***द इलस्ट्रेटड एनसाइक्लोपीडिया ऑफ मिनरल्स एंड रॉक्स;*** *प्रकाशक: द प्रमोशनल रिप्रिंट कम्पनी लिमिटेड, लंदन।* ***सेंचुरी एशिया,*** *अगस्त 1999,* ***एनसाइक्लोपीडिया ऑफ इंडियन नेचुरल हिस्ट्री,*** *प्रकाशक:* ***बम्बई नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी।*** ***मॉडर्न केमिस्ट्री:*** *निकोलस डी. ज़िमोपोलस, एच. क्लार्क मेटकॉफ, जॉन इ. विलियम्स; प्रकाशक: होल्ट, राइनहार्ट एंड विनस्टन ऑस्टिन।*

विकास मंत्रालय की एक परियोजना के तहत प्रकाशित
संदर्भ में छपे लेखों में व्यक्त मतों से मानव संसाधन विकास मंत्रालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

एकलव्य के नए प्रकाशन

पढ़ना-लिखना सीख रहे बच्चों के लिए

1. **टिपिक...पाँ... भर्र...**
   कितने शब्द बिखरे हैं हमारे आसपास।
2. **गुब्बारे**
   एक गुब्बारा हमें कितनी सारी बातें बता सकता है।
3. **पास या नापास**
   रोजमर्रा की छोटी-छोटी बातों में क्या ठीक है और क्या नहीं?
4. **अनोखी प्रदर्शनी**
   प्रकृति में कितनी विभिन्नता है।
5. **पत्ते ही पत्ते**
   अपने परिवेश को बारीकी से देखने का एक अभ्यास।

सभी में 24+4 पृष्ठ की सामग्री। प्रत्येक का मूल्य रु. 7.00
पाँच किताबों का सेट रजिस्टर्ड डाक से केवल रु. 45.00 में

रोचक चित्रों और मजेदार कहानियों वाली पाँच और पुस्तिकाएँ –

चूहे को मिली पेंसिल	पृष्ठ 10+4	रु. 5.00
रूसी-पूसी	पृष्ठ 10+4	रु. 5.00
मैं भी...	पृष्ठ 10+4	रु. 6.00
नाव चली	पृष्ठ 10+4	रु. 6.00
बिल्ली के बच्चे	पृष्ठ 14+4	रु. 7.00

पाँच किताबों का सेट रजिस्टर्ड डाक से केवल रु. 40.00 में प्राप्त करें।

दोनों सेट की सभी किताबें रु. 75.00 में रजिस्टर्ड डाक से प्राप्त करें।
राशि मनीआर्डर से या एकलव्य के नाम में बने ड्राफ्ट से इस पते पर भेजें-
एकलव्य, ई-1/25, अरेरा कॉलोनी, भोपाल

बच्चों की भाषा 7

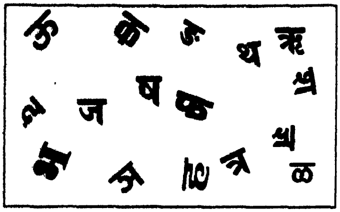

वर्णमाला और उसकी ध्वनि संरचना की गहराई में जाएं तो कण्ठय, तालव्य, ओष्ठय, सघोष, नासिक ... और भी न जाने क्या-क्या है। बोलते हुए हम भी इन बारीकियों को नहीं समझ पाते। लेकिन तीन-चार साल का बच्चा जब बोलना शुरू करता है तो उसके दिमाग में भाषा के ये सारे नियम बैठ जाते हैं। जब बच्चा पहले से ही भाषा के बारे में इतना जानता है तो उसे क्या वर्णमाला रटवाने से ज्यादा रोचक चुनौतियां नहीं दी जानी चाहिए?

ठोस, द्रव, गैस 15

कांच को आप ठोस ही कहेंगे न? लेकिन क्या कांच सचमुच में ठोस है? एक अलग ही स्तर पर ठोस, द्रव और गैस की जांच-पड़ताल करता है; और उसके आधार पर कांच को पुनः परिभाषित करता है यह लेख।

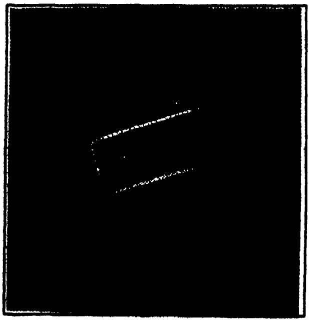

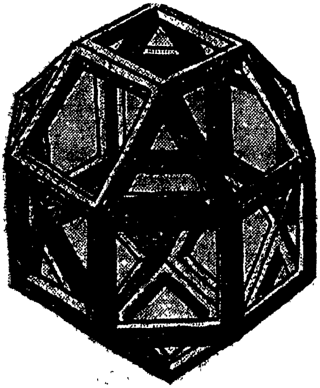

ज्यामितीय आकृतियां 23

समबाहु त्रिभुज से शुरू करके वर्ग, सम-पंचभुज ..... ऐसे अनगिनत सम-बहुभुज बन सकते हैं। पर अगर तीन आयामी आकृतियों पर नज़र डालें तो समझ में आता है कि केवल पांच तरह के सम-बहुभुज ही संभव हैं। इतना ही नहीं, आज से 2500 साल पहले भी लोगों को इन पांच आकृतियों के बारे में जानकारी थी।

परीक्षाएं और सिर्फ 37

मौजूदा परीक्षा प्रणाली का विश्लेषण करके देखिए। बच्चा सिर्फ सवाल-जवाब याद करके रह जाता है। गलती बच्चे की कतई नहीं है क्योंकि परीक्षाएं केवल यही जांच कर रही हैं कि कौन कितना भारी रटंतू है।
प्रचलित परीक्षा के विकल्प भी संभव हैं। प्रस्तुत हैं विकल्प के कुछ उदाहरण।

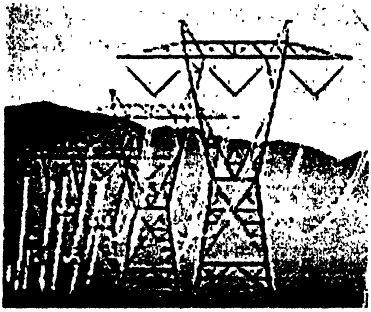

क्या बहे बिजली 50

हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में बिजली का इस्तेमाल इतना बढ़ गया है कि बोलचाल में करंट, वोल्टेज, फ्यूज़ जैसे शब्द आम हो गए हैं। विज्ञान शिक्षकों की इस विषय की पकड़ परखने के लिए पिछले दिनों एक सर्वेक्षण किया गया; ताकि पता चल सके कि विद्युत की मूलभूत अवधारणाओं के बारे में उनकी समझ कितनी पुख्ता है।

शैक्षिक संदर्भ

अंक 28, जुलाई-अगस्त 1999

इस अंक में

आपने लिखा 4

बच्चों की भाषा 7
रमाकांत अग्निहोत्री

ठोस, द्रव, गैस और कांच 15
सुशील जोशी

ज्यामितीय आकृतियां 23
अभिषेक धर

परीक्षाएं और सिर्फ 37
कैरन हैडॉक

एक बीजपत्री पौधों में 45
स्निग्धा मित्रा

क्या बहे बिजली के तार में . . . 50
अजय शर्मा

मेरा एक प्रयोग 65
रोमा देव हालदार

कुछ खेल 79
किशोर पंवार

शैक्षिक नवाचार और 82
दिनेश भट्ट

छिपा रहस्य 89
क्वेंटीन रेनॉल्ड

शुक्राणुओं का सफरनामा 94
के. आर. शर्मा

मैं आपकी संदर्भ पत्रिका की नियमित पाठक हूं। मुझे इससे काफी नई-नई जानकारी मिलती है। लेकिन मुझे यह पत्रिका नियमित नहीं मिल पाती है और मेरे द्वारा भेजे पत्र का जवाब भी नहीं दिया जाता है।

मैं यह जानना चाहती हूं कि किसी दुर्घटना में इंसान का हाथ कट जाने से उसकी जान नहीं जाती, परंतु हाथ की नस कट जाने पर उसकी मृत्यु हो जाती है, ऐसा क्यों होता है?

सुनंदा नागले
इटारसी, ज़िला होशंगाबाद
मध्यप्रदेश

पिछले दिनों मुझे संदर्भ का अंक 26 (नवंबर 98 - अप्रैल 99) प्राप्त हुआ। इसमें प्रस्तुत सभी लेख ज्ञानवर्धक हैं। भूविज्ञान विषय से जुड़े होने के कारण मेरा ध्यान सबसे पहले 'प्रीकैम्ब्रियन जीवाश्म' पर गया।

भारत तथा अन्य देशों में प्रीकैम्ब्रियन जीवाश्मों पर बहुत ही सीमित अध्ययन हुआ है। इस कारण लेखक का यह लेख एक अभिनव तथा सराहनीय प्रयास है। लेखक ने कैम्ब्रियन चट्टानों का आधार 60 करोड़ वर्ष माना है जो आमतौर पर मान्य है। किन्तु वर्तमान शोध के अनुसार कैम्ब्रियन कल्प 49.5 से 54.5 करोड़ वर्ष पूर्व था (ऐपिसोड, अंक 19, 1996)। इसलिए प्रीकैम्ब्रियन युग आज से 54.5 करोड़ वर्ष पूर्व का काल था।

पृथ्वी पर प्रथम जीवाश्म साइनोबैक्टीरिया के हैं, जो 3.5 अरब पुरानी प्रीकैम्ब्रियन चट्टानों में पाए गए। इसी तरह मंगल ग्रह से अलग हुए उल्का पिंड ए. एल. एच. 84001 में पाए गए सूक्ष्म बैक्टीरिया के जीवाश्म लगभग 3.6 अरब वर्ष पूर्व के हैं।

डॉ. डी. पी. दुबे और डॉ. पी. के. कटल ने हाल में किए अपने शोधकार्य के बाद विन्ध्य चट्टानों के संबंध में कैम्ब्रियन तथा प्रीकैम्ब्रियन की सही तथा मान्य सीमा के निर्धारण पर ज़ोर दिया है।

प्रीकैम्ब्रियन की निचली आयु का निर्धारण जो भी हो लेकिन लेखक ने 55-60 करोड़ वर्ष से लेकर 350 करोड़ वर्ष के बीच में जीवाश्म रिकॉर्ड के खालीपन को लेकर शोध का एक नया विषय सामने प्रस्तुत किया है जिसका महत्व आने वाले समय में प्रमाणित होगा। लेखक तथा संदर्भ को मेरी बधाई एवं शुभकामनाएं।

डॉ. विजय खन्ना
प्रोफेसर, भूविज्ञान
जबलपुर, मध्यप्रदेश

मैंने और मेरी अनेक सहेलियों ने संदर्भ का 27 वां अंक पढ़ा। 'एक वैज्ञानिक को तराशना' में बताया गया है कि अगर आप वैज्ञानिक बनना चाहते हो तो बचपन की नींव को सुदृढ़ करना चाहिए। ब्लैक होल के बारे में पढ़कर हमारे ज्ञान में वृद्धि हुई। इसी तरह खग्रास सूर्यग्रहण के बारे में भी पढ़ा। कई लोग इसे दैवी प्रकोप

समझते हैं, उन्हें यह लेख पढ़कर सुनाया जिससे वे पुरानी मान्यताओं को बदल सकें।

संदर्भ को मैंने और मेरी सहेलियों ने पहली बार पढ़ा। इस अंक को पढ़कर हमारे मन में वैज्ञानिक बनने का उत्साह जागृत हुआ तथा इस प्रकार की नई जानकारियां प्राप्त करने की उत्सुकता उत्पन्न हुई।

चंदा सारन (कक्षा नवमीं)
सरस्वती विद्या मंदिर,
ज़िला हरदा, मध्यप्रदेश

मैंने एक वर्ष पहले से अपने ऑफिस में आने वाली संदर्भ पत्रिका पढ़ना शुरू किया। पत्रिका में जिस सरल तरीके से विज्ञान समझाया जाता है वह बहुत अच्छा और रोचक है। कृपया आप आइंस्टीन के 'जनरल रिलेटीविटी' पर भी कुछ प्रकाशित कीजिए। इससे काफी पाठक लाभांवित होंगे।

शैलेष नागर
मनुस्यारी, पिथौरागढ़
उत्तर प्रदेश

संदर्भ का सूर्यग्रहण की जानकारियों से भरा अंक ठीक सूर्यग्रहण से पहले पाकर सुखद आश्चर्य हुआ। अंक सूर्यग्रहण से पहले मिला इसलिए छात्रों को जानकारी देने का मौका भी मिल सका।

इस अंक में ब्लैक होल संबंधी लेख पढ़कर अच्छा लगा, वैसे भी ब्लैक होल कक्षा नवमीं में विज्ञान के पाठ्यक्रम में है। यदि आप इस लेख में तारे का जन्म, विकास, लाल दानव चरण को भी शामिल करते तो बेहतर होता। मैंने संदर्भ का यह अंक हाई स्कूल के कुछ छात्रों को पढ़ने के लिए दिया। उन्हें ब्लैक होल के अलावा 'पौधों में भोजन' पसंद आया। वास्तव में सहज और सरल हैं ये दोनों लेख।

'स्कूली विज्ञान पर बच्चों का नज़रिया' में लगभग सभी स्कूलों का चित्रण है।

कविता शर्मा (शिक्षिका)
सरस्वती विद्या मंदिर,
ज़िला हरदा, मध्यप्रदेश

'कुछ भूगोल कुछ इतिहास' (अंक-26) लेख में 'माल' शब्द जिसे कालीदास ने प्रयोग किया है, उससे लेखक को काफी असुविधा हो रही थी। दरअसल यह शब्द मालवी बोली का है। इसका अर्थ – जंगल, खेत तथा ढोर आदि को लेकर होता है। यह शब्द पंजाबी में भी है। मालवी में राजस्थानी, गुजराती, मराठी के शब्द बहुतायत में हैं और संस्कृत इनकी मां है। इसलिए इसका उत्स उसी में खोजा जाना चाहिए।

रजनीकांत शर्मा
कमीशनर कॉलोनी, होशंगाबाद
मध्यप्रदेश

शैक्षिक संदर्भ का 26 वां अंक मिला। संपादकीय पढ़कर मालूम हुआ कि पत्रिका के अनुरूप सामग्री न मिल पाने के कारण कितनी मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है।

ऐसा नहीं है कि हमारे देश में वैज्ञानिकों की कमी है या विज्ञान में रुचि रखने वाले लोगों की कमी है। यह पाठकों की कमी है कि हम ऐसे लोगों तक इस पत्रिका को पहुंचा नहीं पा रहे हैं। वैसे इस बार का मुखपृष्ठ आकर्षक बन पड़ा है।

राजकुमार गुप्ता
नाशिक जेल, नाशिक
महाराष्ट्र

पिछले कुछ समय से मुझे संदर्भ के प्रत्येक अंक की दो प्रतियां मिल रही हैं और अंक 24-25 तो मिला ही नहीं।

मुझे संदर्भ के 26 वें अंक में 'जब हवा न बहे तो' और 'क्यूं है रात अंधेरी' लेख बहुत अच्छे लगे। इन्हें पढ़कर बहुत सारी नई जानकारी मिली।

27 वें अंक में 'खग्रास सूर्य ग्रहण' लेख से मुझे सूर्य ग्रहण की जानकारी मिली जिसे मैंने अपनी सहेलियों को भी पढ़वाया। एक वैज्ञानिक की जीवनी के बारे में पढ़कर संदर्भ के प्रति मोह और भी बढ़ गया है।

रूबी चंद्रवंशी
82, गढ़ीपुरा
जिला हरदा, मध्यप्रदेश

अंक 27 मिला। 'एक वैज्ञानिक को तराशना' अच्छा लगा। सही मायने में बच्चों पर परिवेश का बड़ा प्रभाव पड़ता है। अगर बचपन में ही उन्हें कूप मंडूप बना दिया जाए तो फिर बड़े होने पर उनमें बदलाव की उम्मीद करना बेमानी है।

सूर्य ग्रहण के बारे में इस तरह की बात सामने आई कि ग्रहण के दौरान पानी भरी परात में यदि थोड़ी दूरी पर दो मूसल खड़े कर दिए जाएं तो ग्रहण लगते ही वे आपस में टकराने लगते हैं; और ग्रहण छूटते ही फिर सीधे खड़े हो जाते हैं।

होस्टल के 50-60 लड़कों और चार-पांच प्रोफेसरों के बीच यह प्रयोग ग्रहण के दौरान किया गया। सभी का दृढ़ विश्वास था ऐसा ही होगा। परन्तु प्रयोग सफल होता न देखकर सभी को बड़ी ठेस लगी। विद्यार्थियों ने कहा कि अब हम ऐसी सुनी-सुनाई बातों पर विश्वास नहीं करेंगे जब तक हम खुद करके न देख लें।

उस दिन अच्छा लगा और फाइनमेन वाला लेख बार-बार याद आता रहा।

किशोर पंवार
शासकीय महाविद्यालय, सेंधवा,
मध्यप्रदेश

[illegible]

— संपादक मंडल

बच्चों की भाषा सीखने की क्षमता

रमाकांत अग्निहोत्री

जब हम स्कूल में बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने का (अक्सर असफल) प्रयास करते हैं तो अक्सर यह भूल जाते हैं कि हर बच्चे में भाषा सीखने की असीम क्षमता होती है और वह अपनी भाषा व उसका व्याकरण पूर्णतया आत्मसात करने के बाद ही स्कूल आता है। यानी चार वर्ष की आयु का बच्चा भाषागत दृष्टि से एक वयस्क ही होता है। ध्वनि-संरचना का जटिल संसार बच्चा स्वयं बिना किसी की मदद के सुलझा लेता है। यही नहीं कि हर बच्चा जानता है कि उसकी भाषा की ध्वनियां कैसे बोली जाएंगी अपितु यह भी कि ये ध्वनियां किस क्रम में आ सकती हैं और किस क्रम में नहीं। ये

सब नियम बच्चे के दिमाग में सु-व्यवस्थित ढंग से उपलब्ध रहते हैं। बच्चा सार्थक शब्द ही बोलता है, यदा-कदा नए-नए शब्द बनाता भी है तो वे ध्वनि संरचना के नियमों का उल्लंघन नहीं करते। ज़रा सोचिए कि 'प, फ, ब, भ और म' में क्या अंतर है। सब ओष्ठय ध्वनियां हैं। चलिए ओंठ तो दिखाई देते हैं। कुछ अनुकरण संभव है। 'क, ख, ग, घ और ङ' के उच्चारण व अंतर को बच्चा कैसे पकड़ता है। और बच्चे को यह नियम कौन बताता है कि हिन्दी के अधिकतर शब्द 'कल, नल, काला, बाल, कील, दरवाज़ा, किताब, पेड़, फूल' आदि जैसे होंगे यानी उनकी संरचना 'व्यंजन-स्वर-व्यंजन-स्वर' होगी। 'परिणाम' शब्द की ध्वनि संरचना देखिए –

प्+अ+र्+इ+ण्+आ+म

बच्चा यह नियम कैसे पकड़ लेता है कि हिन्दी शब्दों के अंत में 'अ' (जो लिखित हिन्दी में सदैव दिखाई देता है) नहीं बोला जाएगा। 'कल' को 'क्+अ+ल्' बोलते हैं न कि 'क्+अ+ल्+अ' जैसा कि लिखा गया है।

कुछ देर के लिए लिखने को भूलकर ध्वनि-संरचना के बारे में सोचिए। हिन्दी-भाषी चार वर्ष की आयु के बच्चे के दिमाग में हिन्दी ध्वनि-संरचना का क्या चित्र होगा यह समझना तो असंभव है। लेकिन उसकी एक छोटी-सी झलक देखने का प्रयास हम कर सकते हैं, बच्चे की भाषा के आधार पर। बच्चा 'पापा, बाबा, मामा, चाचा, काका; काना, खाना; जाना, पाना; पानी, नानी; बाल, जाल; कील, नील' आदि शब्दों में स्पष्ट अंतर करता है। यह अंतर कर पाना तभी संभव है जब बच्चे में 'प्, ब्, म्, क्, च्, ख्, ज्, न्, ल्,' आदि को एक-दूसरे से अलग करने की क्षमता हो। आखिर 'कील' और 'नील' में क्या अंतर है। केवल 'क्' और 'न्' का। 'क्' कण्ठ से बोली जाने वाली ध्वनि है – अल्पप्राण है व अघोष है। 'न्' दन्त्य है – नासिक व सघोष। यह सब न तो मां-बाप जानते हैं, न रिश्तेदार।

बच्चा नियम पकड़ता है

बच्चा यह सब कैसे पकड़ लेता है। और यह एक-दो ध्वनियों की बात नहीं। पूरी ध्वनि-व्यवस्था इन सूत्रों में बंधी है। व्यंजन व्यवस्था देखिए (देखिए तालिका)।

बच्चा यह कैसे समझ लेता है कि
'प्' अल्पप्राण, अघोष, ओष्ठय ध्वनि है
और
'घ्' महाप्राण, सघोष, कण्ठय ध्वनि है।

जैसा विवरण ऊपर दिया गया है वैसा तो बच्चा नहीं दे सकता। परंतु इसमें कोई संदेह नहीं कि यह अंतर

	अघोष		सघोष		सघोष नासिक
	अल्पप्राण	महाप्राण	अल्पप्राण	महाप्राण	
कण्ठ	क	ख	ग	घ	ङ
तालव्य	च	छ	ज	झ	ञ
मूर्धन्य	ट	ठ	ड	ढ	ण
दन्त्य	त	थ	द	ध	न
ओष्ठय	प	फ	ब	भ	म

इन 25 व्यंजनों के अलावा य, र, ल, व, स, ह; श, ष, ळ, ड़ और ढ़ के साथ वर्णमाला में अक्सर संयुक्त व्यंजन 'क्ष, त्र, ज्ञ और श्र' भी दिए जाते हैं। कुछ अन्य ध्वनियों यथा क़, ख़, ग़, फ़, ज़, आदि के बारे में भी चर्चा करेंगे।

उसके दिमाग में है। वह 'पर' और 'घर' में अंतर करता है। दोनों में 'अर' तो समान है। अंतर केवल 'प्' और 'घ्' का ही है। अल्पप्राण/महाप्राण में यह समझना होता है कि ध्वनि के साथ अतिरिक्त वायु का उपयोग होगा या नहीं – 'ख' में है लेकिन 'क' में नहीं। सघोष/अघोष में यह समझना होता है कि गले के अंदर छुपी श्वास नली के ऊपर बैठी स्वर-तंत्री में कंपन है या नहीं। 'क' और 'ख' में कंपन नहीं है, वे अघोष हैं, 'ग' और 'घ' में कंपन है, वे सघोष हैं।

स्वर-ध्वनियों का संसार देखिए:

अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ
ओ औ अं अः ँ ऑ

('ऋ' के बारे में अलग से चर्चा करेंगे। लिखने में मात्राओं का प्रश्न भी सामने आएगा।)

'अ' और 'आ' में अंतर शायद बहुत सरल लगे पर ज़रा महसूस करके देखिए कि 'इ' और 'ए' में क्या अंतर है। सुनने में तो साफ़ है यथा 'कि' और 'के'। पर बोलने में यह अंतर कैसे लाया जाता है। बच्चा यह कैसे पकड़ लेता है कि 'उ' में जीभ को पीछे खींचना है व ओठों को गोल करना है? यह भी समझता है कि व्यंजनों में तो वायु-प्रवाह को कहीं-न-कहीं अवश्य रोकना है; परंतु स्वरों में वायु निरंतर बहती रहनी चाहिए। क्या यह सब अनुकरण से सीखना

संभव है?

ध्वनि संरचना के दो नियमों की, जो 3-4 साल का बच्चा निश्चित रूप से जानता है, हमने ऊपर चर्चा की। एक तो यह कि बच्चा पकड़ लेता है कि अधिकतर शब्दों की संरचना 'व्यंजन-स्वर-व्यंजन-स्वर' होगी। दूसरा यह कि ध्वन्यात्मक मूल्य स्थान के अनुसार अलग-अलग हो सकते हैं। 'लड़का' में 'ल' पूरा है लेकिन 'कमल' व 'कलकल' के तीनों 'ल्' आधे हैं। हिन्दी का नियम है कि 'व्यंजन-स्वर-व्यंजन-स्वर' की कड़ी में अंतिम स्वर बोला नहीं जाएगा।

कुछ और नियम देखिए। अनुस्वार-अनुनासिक (चंद्रबिन्दु) तथा नासिक्य व्यंजनों को कैसे लिपिबद्ध किया जाएगा तथा वर्णमाला व वर्तनी में उसका प्रयोग कैसे होगा; ये तो स्कूली बातें हैं, लिखाई-पढ़ाई से जुड़ी। परंतु इनके उपयोग के ध्वन्यात्मक नियम तो बच्चा सीखकर ही स्कूल आता है। स्वयं अपनी क्षमता से सीखकर। बच्चा जानता है – 'जिस वर्ग की ध्वनि उससे पहले उसी वर्ग का समस्थानीय पंचम नासिक व्यंजन'। यथा 'पंप' में 'म्' होगा; 'आनंद' में 'न्'; 'चंचल' में 'ञ्'; 'पंडित' में 'ण्'। देखिए 'संबंध' में पहला अनुस्वार 'म्' (प वर्ग के 'ब्' से पहले) और दूसरा 'न्' (त वर्ग के 'ध्' से पहले) – क्या कोई बच्चा कभी 'सन्बम्ध' बोलता है?

बच्चा नित ऊल-जलूल नए शब्द बनाया करे पर इस नियम का उल्लंघन न होगा। 'इंक-विंक' में समस्थानीय नासिक व्यंजन 'ङ' ही आएगा। अनुनासिकता बिल्कुल अलग बात है और इसका संबंध स्वरों से है व्यंजनों से नहीं। कुछ विशेष शब्दों में बच्चे को यह सीखना है कि स्वर की ध्वनि मुख के साथ-साथ नाक से भी निकलेगी यथा आँख, आँधी, मैं, हूँ, ऊँट, फूँकना आदि। कुछ शब्दों में तो बच्चे को अनुनासिक स्वरों व नासिक्य व्यंजनों में सूक्ष्म ध्वनात्मक अंतर करना होता है जैसे – हँस (स्वर अनुनासिकता) व हंस (नासिक व्यंजन, पक्षी)।

व्यंजन-स्वर-व्यंजन-स्वर

ध्वनि-व्यवस्था के अन्य नियम देखिए। हर भाषा में संयुक्त ध्वनियों के अपने नियम होते हैं। भाषा-प्रयोग करने वाला हर व्यक्ति इन्हें जानता है पर किसी को बता नहीं सकता। भाषा-वैज्ञानिक भी अनेक तरह के शोध के बाद उनकी झलक भर ही देख पाते हैं। क्योंकि प्रधान नियम है 'व्यंजन-स्वर-व्यंजन-स्वर' इसलिए संयुक्त-ध्वनियां कम ही देखने में आती हैं और जब आती हैं तो उन पर अनेक तरह के अंकुश लगे रहते हैं। अंग्रेज़ी में शब्द के शुरू में तीन से अधिक

व्यंजन ध्वनियां आ ही नहीं सकती। और ये तीन भी केवल ऐसे शब्दों में मिलती हैं – Strike, Street, Scream, Split, Squash आदि। यानी अंग्रेज़ी का यह नियम है कि यदि शब्द के शुरू में तीन व्यंजन ध्वनियां होंगी तो

- पहली व्यंजन ध्वनि केवल 'स्'
- दूसरी व्यंजन ध्वनि केवल 'प्', 'त्' या 'क्'
- तीसरी व्यंजन ध्वनि केवल 'य्', 'र्', 'ल्' या 'व्'

हिन्दी में भी 'स्त्री' में 'स्', 'त्' व 'र्' ही हैं। 'प्रकार', 'न्यूनता', 'स्नान', 'स्नेह', 'क्रम', 'ट्रक', 'प्यास', 'व्याख्या' आदि के आरंभ में केवल दो ही व्यंजन ध्वनियां हैं। क्या हिन्दी में ऐसा संभव है कि शब्द के आरंभ में तीन व्यंजन ध्वनियां आएं और उनका क्रम हो:

सघोष महाप्राण
\+
अघोष महाप्राण
\+
अघोष अल्पप्राण

(यथा 'घ्')+(यथा 'ख्')+(यथा 'क्')

आखिर बच्चे कैसे समझ लेते हैं कि 'हरक्वीच' जैसा शब्द हिन्दी में नहीं हो सकता। यही नहीं कि बच्चे हिन्दी के 41 व्यंजनों को अलग कर लेते हैं; वे इस नियम को भी सहज ही आत्मसात कर लेते हैं कि कौन-कौन सी व्यंजन ध्वनियां एक-दूसरे के साथ जुड़ सकती हैं। संभव है कि हिन्दी का यह नियम है कि 'सघोष महाप्राण + अघोष महाप्राण + अघोष अल्पप्राण' वाला क्रम हिन्दी में नहीं हो सकता। (जो अन्य किसी भाषा में हो सकता है)। यानि 'ध्ठे', 'भ्टा', 'छ्ती', 'भ्क्चू' आदि हिन्दी में संभव नहीं। हिन्दी का शब्दकोष देखें – शब्दों के शुरू में अधिकांश 'क्' के साथ 'र' मिलेगा या 'श्' यानी 'क्रम', 'क्षमा' आदि। वो ही व्यंजन; उसके बाद स्वर।

'व्यंजन-स्वर', 'स्वर-व्यंजन' का क्रम बना रहे, यानी दो स्वर या दो व्यंजन साथ-साथ आएं इस व्यवस्था के लिए अलग-अलग भाषाएं अलग-अलग प्रावधान करती हैं। बांग्ला में 'सीता का' कहने के लिए केवल 'र्' जोड़ते हैं, 'सीतार'। लेकिन 'राम का' कहने के लिए केवल 'र्' जोड़ने से काम नहीं चलेगा क्योंकि 'राम' में दो व्यंजन साथ-साथ आ जाएंगे। इसलिए 'एर' का प्रयोग, 'र' से पहले स्वर, 'रामेर'।

अंग्रेज़ी में भी यही नियम भाषा की पूरी ध्वनि-संरचना पर फैला हुआ है। a boy कहते हैं लेकिन an egg; दो स्वरों के बीच 'न्' आ गया। car-park में दोनों 'र' का उच्चारण नहीं होता, इंगलैंड की अंग्रेज़ी में। लेकिन car-engine में 'र्' का उच्चारण होगा।

'स्टेशन' को पंजाब में 'सटेशन', उत्तर प्रदेश में 'इस्टेशन' व हरियाणा में 'टेशन'। दो व्यंजन साथ-साथ भाते नहीं हमें। बोलने को तो बोल ही सकते हैं। अंग्रेज़ी में तो दो स्वर साथ होने पर 'र्' अक्सर आसमान से टपक पड़ता है जैसे India and Pakistan में India के बाद 'र्' आएगा उच्चारण में; वैसे ही idea of में idea के बाद।

बच्चा यह कैसे सीखता है?

ध्वनि-संरचना के संसार की यह एक छोटी-सी झलक है। बच्चा यह सब स्वयं कैसे सीख लेता है, चार वर्ष की छोटी-सी आयु में? अनुकरण से तो नहीं सीख सकता। अनुकरण उस बात का हो जो कोई दिखा सके या बता सके। ये नियम तो भाषा वैज्ञानिक भी ठीक से नहीं समझते। इस तरह का भाषागत् ज्ञान होने के लिए मुख्यत: दो चीज़ें होनी आवश्यक लगती हैं। भाषा सीखने की सहजात क्षमता व ऐसा वातावरण जिसमें भाषा तो खूब हो लेकिन स्पष्ट तौर पर नियम व व्याकरण न हों। वातावरण ऐसा कि बच्चे को कुछ बोझ महसूस न हो, बोरियत न लगे, मजबूरी न हो। बच्चे का ध्यान सार्थक संदर्भ पर हो, न कि व्याकरण के नियमों व भाषा की शुद्धता पर। बच्चे के लिए हम किसी विशेष भाषागत वातावरण की रचना नहीं करते। स्वाभाविक, सहज संदर्भों में भाषा का प्रयोग करते हैं – उससे बातचीत करते हैं, उसकी बातचीत (कितनी भी गलत क्यों न हो) प्यार से सुनते हैं व उसको अन्य लोगों की

बातचीत (चाहे उसे समझ आए न आए) सुनने की पूर्ण स्वतंत्रता देते हैं। सामाजिक बातचीत के अथाह समुद्र से बच्चा स्वयं एक सुव्यवस्थित व्याकरण व शब्द ढूंढ लाता है। ये कहां तक जायज़ है कि ऐसे बच्चे को हम स्कूल आने पर वर्णमाला, मात्रा व वर्तनी सिखाना शुरू करते हैं?

शुरुआत वर्णमाला से ही क्यों?

आप खुद ही सोचिए ऐसी क्षमताओं वाले बच्चे को जब आप 'न' से 'नल' व 'च' से 'चल' पढ़ाते-लिखाते हैं तो उसे कितनी बोरियत होती होगी। जो बच्चा रोज़मर्रा की बातचीत से स्वयं सब ध्वनियां एवं ध्वनि संरचना के जटिल नियम सहज ही ढूंढ लाता है, क्या वह लिखने-पढ़ने की भाषा से वर्णमाला व वर्तनी के नियम न ढूंढ लाएगा? पता नहीं कब बच्चे की क्षमताओं में हमारी आस्था बनेगी? बच्चे को कविता, कहानी, चित्रकथा, गीत सुनाइए-पढ़ाइए, उसके आसपास उसकी मनचाही सामग्री रखिए। हिज्जे सीखना कोई कठिन कार्य नहीं है बच्चे के लिए। अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग शब्द-चित्रों में जब वही वर्ण बच्चों के सामने आएंगे तो वह उन्हें स्वयं ही पहचान लेगा। सीखने की प्रक्रिया यह नहीं है कि टुकड़े-टुकड़े जोड़ो और एक पूर्ण इकाई बन जाएगी। ठीक इससे उल्टी है। एक पूर्ण छवि पहले बनती है उसमें रंग बाद में भरे जाते हैं, अलग-अलग तरह से। आप ही बताइए – ताजमहल बनने से पहले बना या बनने के बाद? सीखने की मुख्यतः वही दो शर्तें हैं – बच्चे की क्षमताओं में आस्था व बच्चे के लिए रुचिकर वातावरण का निर्माण।

रमाकांत अग्निहोत्री: दिल्ली विश्वविद्यालय के कला संकाय में भाषा विज्ञान पढ़ाते हैं। एकलव्य के प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम से शुरुआत से जुड़ाव।

चित्र: माधुरी पुरंदरे। माधुरी पूना में रहती हैं।

संदर्भ सजिल्द संस्करण

हर जिल्द में हैं:

भौतिकी, रसायन, प्राणिशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र,
प्राणी व्यवहार, सूक्ष्मजैविकी, गणित, इतिहास,
भूगोल-भूविज्ञान, वैज्ञानिकों की जीवनियां,
पढ़ाने के तरीके, बच्चों के साथ अनुभव,
प्रयोग-मॉडल एवं गतिविधियां,
सर्वे रिपोर्ट, कहानियां, पहेलियां
और
सवालीराम के सवाल-जवाब

संदर्भ अंक 1-6, 7-12, 13-18 और 19-24 के सजिल्द संस्करण उपलब्ध हैं। इनके साथ है प्रकाशित अंकों का विषयवार इंडेक्स।

प्रत्येक का डाक-खर्च सहित मूल्य 65 रु.।

राशि डिमांड ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से भेजें।
ड्राफ्ट एकलव्य के नाम से बनवाएं।
अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें।

एकलव्य
कोठी बाज़ार
होशंगाबाद, म. प्र, 461001
फोन: 07574 - 53518

एकलव्य
ई - 1/25, अरेरा कॉलोनी
भोपाल - 462016
ई - मेल: Eklavyamp@vsnl.com

ठोस, द्रव, गैस और कांच

सुशील जोशी

पदार्थ की तीन अवस्थाओं के बीच हम बखूबी भेद कर बता देते हैं कि यह ठोस है, यह द्रव और यह गैस। कांच के बारे में आपका क्या ख्याल है? ठोस-द्रव-गैस में से किस समूह में इसे शामिल करेंगे आप?

हम प्राय: पदार्थ की अवस्थाओं के बीच आसानी से भेद कर लेते हैं। कम-से-कम हम मानते तो यही हैं। इसके आधार पर हम पदार्थों को ठोस, द्रव व गैस इन तीन किस्मों में बांट देते हैं। किन्तु क्या हम भलीभांति इस वर्गीकरण को जानते हैं? मसलन आपने भी एल. सी. डी. का नाम सुना होगा — लिक्विड क्रिस्टल डिस्प्ले। केल्कुलेटर में हमें जो अंक नज़र आते हैं वे वाकई 'लिक्विड क्रिस्टल' की बदौलत दिखाई देते हैं। यह एक साधारण-सा नाम है और हम इसे सुना-अनसुना कर देते हैं। परन्तु ज़रा

आकार

निश्चित
ठोस (Solid)

बर्तन के अनुरूप
तरल (Fluid)

आयतन निश्चित
द्रव (Liquid)

आयतन अनिश्चित
गैस (Gas)

गौर करें तो लिक्विड क्रिस्टल यानी 'तरल रवा' थोड़ा विरोधाभासी जुम्ला नहीं लगता? यदि कोई पदार्थ तरल है तो फिर वह रवा कैसे हुआ?

पदार्थ की अवस्थाओं के बारे में ऐसी कई रोचक व हैरत अंगेज़ बातें हैं जो हमें इस सरल वर्गीकरण के बारे में सोचने पर विवश कर देती हैं। पता नहीं आपने यह बात कहीं पढ़ी-सुनी है या नहीं मगर भौतिक-रसायन की मानक पुस्तकों में यह जानकारी दी जाती है कि कांच वास्तव में ठोस नहीं तरल है। आप कहेंगे कांच, और तरल? तरल पदार्थों से भी बर्तन बनते हैं क्या?

ठोस-द्रव-गैस के गुण

आम तौर पर हम ठोस, द्रव, गैस का समूहीकरण करते वक्त पदार्थों के लाक्षणिक गुणों पर ध्यान देते हैं। जैसे निश्चित आकार, निश्चित आयतन, प्रवाहित होना वगैरह। यदि पदार्थ का आकार निश्चित है तो हम उसे ठोस कहते हैं। यदि पदार्थ बर्तन का आकार ग्रहण कर ले तो वह तरल होता है। तरल में द्रव व गैस दोनों आते हैं।

ठोस

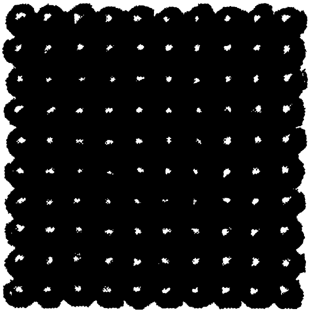

द्रव

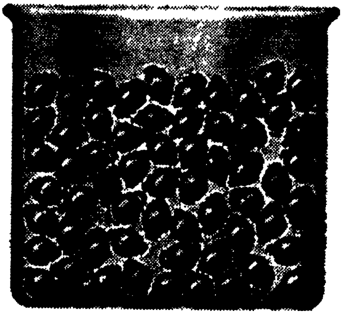

इसके बाद यदि किसी पदार्थ को आसानी से दबाया-फैलाया जा सकता है तो वह गैस है, अन्यथा द्रव।

आप अवश्य ही इस परिभाषा से सहमत होंगे। कांच के मसले को थोड़ी देर के लिए मुल्तवी करके पहले कुछ अन्य साधारण पदार्थों पर ध्यान देते हैं। नमक (या शक्कर या आटे) के बारे में आपका क्या ख्याल है। स्पष्टतः ये ठोस हैं। ज़रा फिर से गौर कीजिए। क्या शक्कर बहती नहीं? क्या वह जिस बर्तन में भरी जाए उसका आकार ग्रहण नहीं कर लेती? इन आधारों पर क्या आप शक्कर को द्रव मानने पर राजी हो जाएंगे? ज़ाहिर है शक्कर को द्रव मानने में आपको एतराज़ होगा। शायद आप कहेंगे कि जब शक्कर 'बहती' है या 'फ्री फ्लो' नमक बहता है तो हम उनके कणों को साफ-साफ देख सकते हैं। अतः ये ठोस हैं। पानी के कण तो हमें दिखते नहीं। परन्तु कणों का अलग-अलग दिखना या न दिखना तो इस बात पर निर्भर है कि वे कण कितने बड़े हैं। तो फिर शक्कर-नमक को द्रव न मानने का कारण क्या है?

अलबत्ता इस उदाहरण से एक बात स्पष्ट है कि जो परिभाषा हमने पढ़ी थी वह अपर्याप्त है। कई बार वह परिभाषा रोज़मर्रा के अनुभवों पर भी ठीक से लागू नहीं की जा सकती।

दरअसल ठोस-द्रव-गैस का वर्गीकरण हम जितना कठोर मानते हैं (यानी इन्हें हम जितने स्पष्टतः विभाजित समूह मानते हैं) यह उतना कठोर है नहीं। इसमें विभाजन रेखाएं उतनी कठोरता से परिभाषित नहीं की जा सकतीं। इन अवस्थाओं को लेकर कठोर विभाजन रेखाएं खींचने से बेहतर होगा कि इनके बारे में एक समझ निर्मित की जाए – खास तौर से इनके बीच संक्रमण (Transition)

गैस

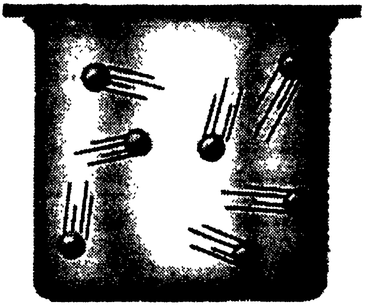

पदार्थ की तीन अवस्थाएं: ठोस, द्रव और गैस। इन तीनों अवस्थाओं में पदार्थ में कणों की स्थिति को दिखाने की कोशिश इस चित्र में की गई है।
ठोस में कण काफी पास-पास होते हैं और उनमें एक पैटर्न बन जाता है। द्रव में कण आपस में टकराते हैं, दूर जाते हैं लेकिन फिर भी थोड़ा बेतरतीब पैटर्न दिखाई देता है। गैस में कण गति तो करते हैं लेकिन कोई पैटर्न नहीं दिखता।

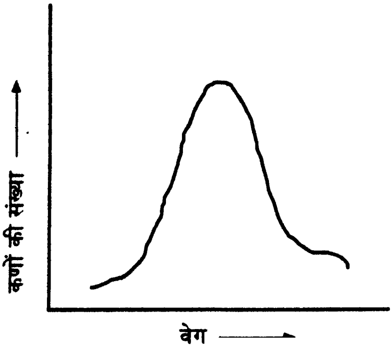

गैसीय अवस्था में बहुत कम रफ्तार वाले कण और सबसे ज़्यादा रफ्तार वाले कण काफी कम होते हैं। ज़्यादातर कण इन दोनों की बीच की स्थिति में गति कर रहे होते हैं।

को समझने का प्रयास किया जाए। समझ की दृष्टि से बेहतर यही होगा कि इन अवस्थाओं को मात्र लाक्षणिक स्तर पर देखने की बजाए आण्विक स्तर पर देखा जाए। दरअसल आण्विक व्यवस्था के नज़रिए से देखने पर स्पष्ट होता है कि ये तीन अवस्थाएं आण्विक व्यवस्था के अलग-अलग स्तर की द्योतक हैं। मैं यह मानकर चलूंगा कि आप पदार्थ की कण प्रकृति से परिचित हैं। ये कण अणु, परमाणु या आयन हो सकते हैं।

आण्विक अवस्थाएं

जब ये कण एक-दूसरे से पूरी तरह स्वतंत्र होते हैं, जब उनके बीच परस्पर क्रिया की कोई गुंजाइश नहीं होती तब वे बेतरतीबी से इधर-उधर गति करते रहते हैं। समय-समय पर ये एक-दूसरे से टकराते भी हैं मगर टकराकर अपने-अपने रास्ते चले जाते हैं। इस अवस्था को हम गैसीय अवस्था कहते हैं। सारे कणों का वेग एक बराबर नहीं होता। कुछ कण बहुत तेज़ रफ्तार से भटक रहे होते हैं तो कुछ कण बहुत कम रफ्तार से। शेष कण इन दो अतियों के बीच की रफ्तार पर होते हैं।

यदि हम प्रत्येक वेग पर कणों की संख्या का ग्राफ बनाएं तो लगभग बनाए गए चित्र जैसी आकृति प्राप्त होगी। बहुत कम रफ्तार वाले कणों की संख्या भी बहुत कम है और बहुत ज़्यादा रफ्तार वाले कण भी थोड़े से हैं। अधिकांश कण एक औसत रफ्तार के आसपास हैं। इस चित्र को हम सामान्य वितरण चित्र कहते हैं – घंटी के आकार का।

ज़रा देखते हैं कि जब ये कण टकराते हैं तो क्या होता है। प्रत्येक कण की कुछ निश्चित गतिज ऊर्जा यानी 'काइनेटिक एनर्जी' है। जब दो कण एक हद से ज़्यादा पास आ जाते हैं तो इनके बीच परस्पर क्रिया सम्भव हो जाती है। निकटता की एक स्थिति ऐसी होती है जब इनके बीच आकर्षण उत्पन्न होता है। किन्तु यदि ये कण

बहुत तेज़ रफ्तार से पास-पास आएं (और आकर्षण की वजह से यह रफ्तार और बढ़ जाए) तो ये बहुत पास पहुंच जाते हैं। एक हद से ज़्यादा पास आने पर इनके बीच विकर्षण उत्पन्न हो जाता है। तो ये फिर दूर हट जाते हैं।

कुल मिलाकर स्थिति यह होती है कि कोई व्यवस्था नहीं बन पाती, हर कण बेतरतीब ढंग से गतिशील रहता है। यह गैस है।

अब मान लीजिए इन कणों की ऊर्जा को कम किया जाए। अर्थात तापमान को कम किया जाए। तापमान दरअसल कणों की गति का ही नाप है। ऊर्जा कम होगी तो इनकी गति भी मन्द पड़ेगी। तब इनकी आपसी टक्कर उतने वेग से नहीं होगी। अतः ये इतने निकट नहीं पहुंचेंगे कि विकर्षण उत्पन्न हो जाए। कहने का मतलब यह नहीं है कि अब हर टक्कर इस तरह की होगी। वेगों का सामान्य वितरण तो रहेगा ही किन्तु औसत कम हो जाएगा। अतः कणों के बीच विकर्षण की हद तक निकटता पैदा न हो, तब ये कण टकराने के बाद वापस दूर भागने की बजाए पास-पास ही रहेंगे। हां, यह युग्म पूरा-का-पूरा गति करता रहेगा और दोनों कण भी परस्पर एक औसत दूरी के इर्द-गिर्द कम्पन्न करते रहेंगे।

अब हम कहते हैं कि द्रव बनने की क्रिया शुरू हो गई है। जब पूरे आयतन में ऐसे कई कण-पुंज बन जाएं तो गैस का द्रवीकरण हो गया। अभी भी ये कण-पुंज स्वतंत्र बेतरतीब गति कर रहे हैं, टकरा रहे हैं, कभी-कभी टूट रहे हैं वगैरह। मगर कुल मिलाकर टुकड़ों-टुकड़ों में एक व्यवस्था निर्मित हो गई है। यह व्यवस्था कितनी दूर-दूर तक फैलेगी यह इस बात पर निर्भर है कि द्रव के कणों की फितरत क्या है।

जब क्रिस्टल बनते हैं

बहरहाल, अब हम ज़्यादा रोचक मसले पर आते हैं। द्रव को और ठण्डा किया जाए। कण-पुंजों की गति को और मंद किया जाए। एक तापमान ऐसा आएगा जब कण-पुंजों की स्थानांतरण गति बहुत मंद हो जाएगी। तापमान कम होते-होते हिमांक आ गया। यह वह तापमान है जिस पर द्रव ठोस में परिवर्तित हो जाता है। इस तापमान पर आमतौर पर उस पदार्थ के रवे (क्रिस्टल) बनते हैं। परन्तु क्रिस्टल बनने की क्रिया कई अन्य कारकों पर निर्भर है। परन्तु उससे पहले क्रिस्टल बनने की सामान्य क्रिया पर एक नज़र डालना उचित होगा।

जैसे-जैसे तापमान कम होता है द्रव के कण-पुंज या यदि कोई स्वतंत्र कण हों, तो उनकी गति मंद पड़ने लगती है। वे एक-दूसरे से टकराते हैं और यदि उचित तरीके से टकराएं तो उनके बीच बंधन बन जाते हैं। प्रत्येक

पदार्थ के लिए इन बंधनों के बनने का एक विशिष्ट पैटर्न होता है। लिहाज़ा उचित तरीके से टकराने का अर्थ है कि वे आपस में ऐसे कोण, ऐसी दिशा व ऐसे फलक से टकराएं कि ये पैटर्न बन सके। धीरे-धीरे यह पैटर्न पूरे आयतन में बनने लगता है और द्रव ठोस (क्रिस्टल रूप) में तब्दील हो जाता है। कण-पुंज इस तरह से टकराएं, यह संयोग व सम्भाविता का खेल है।

इस संयोग-सम्भाविता के खेल में कई अगर-मगर होते हैं। इसलिए इस क्रिया पर कई बातों का प्रभाव पड़ता है:

1. **ठण्डा करने की दर:** आम तौर पर देखा गया है कि द्रव को तेज़ी से ठण्डा करें तो पर्फेक्ट क्रिस्टल नहीं बनते।
2. **धूल के कणों या सूक्ष्म क्रिस्टलों की उपस्थिति:** प्रायः क्रिस्टलीकरण की प्रक्रिया में सूक्ष्म धूल कणों या उसी पदार्थ के सूक्ष्म क्रिस्टल की उपस्थिति से मदद मिलती है। धूल कणों से क्यों मदद मिलती है हम नहीं जानते। मगर सूक्ष्म क्रिस्टल की उपस्थिति में द्रव के भटकते कणों को जमने की जगह मिल जाती है। इन कणों को केन्द्रक कहते हैं। जितने ज़्यादा केन्द्रक बनेंगे उतने छोटे-छोटे क्रिस्टलों का निर्माण होगा।
3. **यांत्रिक हलचल:** कई बार ऐसा देखा गया है कि जिस बीकर या परखनली में द्रव रखकर क्रिस्टलीकरण किया जा रहा है उसकी अंदरूनी दीवारों को खरोंचने वगैरह से क्रिस्टल बनने में मदद मिलती है। इसका कारण शायद यह है कि यदि हिमांक के आसपास द्रव की श्यानता (Viscosity) बहुत ज़्यादा हो जाए तो उसके कण-पुंजों की गति बहुत मंद पड़ जाती है तथा इस बात की सम्भावना कम हो जाती है कि सही पैटर्न में एक-दूसरे के पास आ सकें। तब यांत्रिक हलचल से मदद मिलती है।

अब शक्कर, नमक पर गौर कीजिए। परिस्थिति ऐसी है कि इनको द्रव अवस्था से ठंडा किया जा रहा है। अब कई छोटे-छोटे केन्द्रक बन जाएं तो छोटे-छोटे ढेरों क्रिस्टल बन जाएंगे। परन्तु पूरे आयतन में एक व्यवस्था नहीं बनेगी। यह ठोस-द्रव के बीच की ही अवस्था है। लिहाज़ा ये क्रिस्टल अभी स्थानांतरण गति कर सकते हैं।

कांच का बनना

यहां आकर एक रोचक परिस्थिति पर गौर कीजिए। किसी द्रव को ठण्डा किया जा रहा है। उसमें केन्द्रकों का निर्माण नहीं हो पाया। और मान लीजिए द्रव की श्यानता भी खूब बढ़ गई। तब उसके कण पुंजों की गति इतनी मंद हो जाएगी कि उनके सही तरह से साथ-साथ आने की सम्भाविता

नगण्य रह जाएगी। ऐसे द्रव का तापमान (उक्त परिस्थिति में) हिमांक से नीचे हो जाने के बाद भी यह द्रव ही रहेगा। कांच दरअसल ऐसा ही पदार्थ है – अतिशीतलित द्रव! (Super Cooled Liquid)

कांच के द्रव होने के कई प्रमाण हैं। उन सबमें न जाते हुए यहां इतना ही कहना मुनासिब है कि कांच बहता है। हां, यह ज़रूर है कि कांच की श्यानता इतनी ज़्यादा है कि यह बहुत धीमे-धीमे बहता है। कहते हैं कि पुरानी इमारतों की खिड़कियों में लगे कांच ऊपर से पतले और नीचे से मोटे हो गए हैं। इतने बरसों में कांच बह-बह कर नीचे आ गया है। यह भी कहते हैं कि यदि कांच की लगभग एक मीटर लंबी छड़ को दो सिरों से दो ईंटों पर टिका दिया जाए तो जल्दी ही वह छड़ बीच में से झुक जाएगी।

कांच की श्यानता को यदि थोड़ा कम किया जा सके तो यह क्रिस्टलीकृत हो जाता है। थोड़ा गर्म करने पर यही क्रिया होती है – तब कांच हमारे लिए किसी काम का नहीं रह जाता क्योंकि आप इस क्रिस्टलीय कांच को मनचाहे आकार में ढाल नहीं सकते। दरअसल इस तरह के अतिशीतलित द्रवों को कई लोग पदार्थ की एक चौथी अवस्था 'विट्रियस' अवस्था कहना पसंद करते हैं।

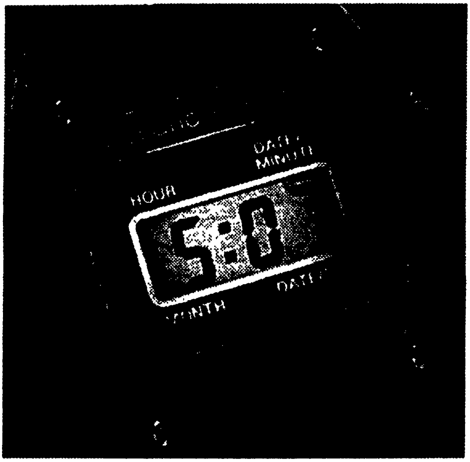

लिक्विड क्रिस्टल: लगभग 100 साल पहले खोजे गए इन क्रिस्टलों का सबसे ज़्यादा इस्तेमाल आज केल्कुलेटर, घड़ियों आदि में होता है।

लिक्विड क्रिस्टल डिस्प्ले

अवस्थाओं के इस जंजाल में 'लिक्विड क्रिस्टल' भी एक मज़ेदार व उपयोगी चीज़ है। इन क्रिस्टल का सबसे मज़ेदार गुण यह है कि ये किसी तरह पदार्थ के समान केशिका नली में चढ़ जाते हैं और पृष्ठ तनाव का भी प्रदर्शन करते हैं। इनका उपयोगी गुण यह है कि आमतौर पर ये पारभासी होते हैं किन्तु चुम्बकीय क्षेत्र आरोपित करने पर ये चुम्बकीय बल रेखाओं की दिशा में पारदर्शी हो जाते

लिक्विड क्रिस्टल

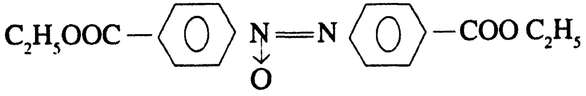

एथिल पी-एजॉक्सी बेन्जोएट

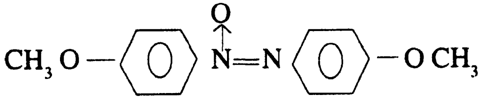

पी-एजॉक्सी एनिसोल

अमोनियम ओलीएट

$C_{17}H_{33}COOC_{27}H_{45}$

कोलेस्ट्राइल एसीटेट

$CH_3COOC_{27}H_{45}$

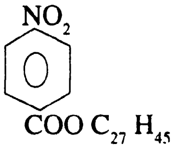

कोलेस्ट्राइल एम-नाइट्रोबेंजोएट

हैं। ऐसे कोई 300 पदार्थ ज्ञात हैं जो 'लिक्विड क्रिस्टल' बनाते हैं। चुम्बकीय बल क्षेत्र में इनके विशिष्ट गुण का फायदा उठाकर ही एल. सी. डी. काम करता है।

मैं मानकर चल रहा हूं कि इस लेख में कई बातें अधूरी-सी हैं। यदि इनमें से हरेक बात का विस्तार किया जाए, तो अलग-अलग लेख ही बन जाएंगे। मैंने जान-बूझकर इन सूत्रों को अधबीच में छोड़ा है। यदि आपके मन में इन बातों को लेकर सवाल उठें, तो चर्चा को आगे बढ़ाया जा सकता है।

सुशील जोशी: एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान कार्यक्रम एवं स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। साथ ही विज्ञान लेखन भी करते हैं।

अद्भुत ज्यामितीय आकृतियां

अभिषेक धर

चित्र: 1

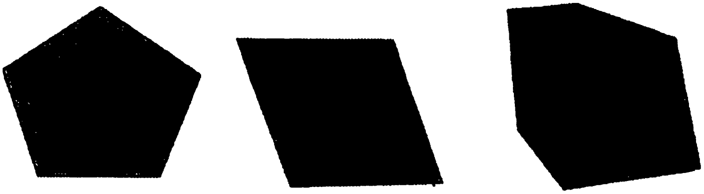

इस लेख में, हम पाठकों के समक्ष कुछ ऐसी ज्यामितीय आकृतियों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करेंगे जिन्हें 'बहुफलक' या 'बहुतल' कहा जाता है।

हम सभी चित्र-1 में दर्शाई गई आकृतियों से भली-भांति परिचित हैं। इन्हें, सामूहिक रूप से 'बहुभुज' कहा जाता है। वह बंद समतल आकृति जिसकी सभी भुजाएं सरल रेखाएं हों, बहुभुज कहलाती हैं।

ऊपर चित्र में दिखाए गए बहुभुजों में फर्क आसानी से समझ में आ जाता है। पहले बहुभुज (चित्र-1अ) में सभी भुजाओं की लंबाई समान है तथा सभी कोण एक जैसे हैं। अन्य दो आकृतियों में ऐसा नहीं है। आकृति 1(ब) में सभी भुजाओं की लंबाई तो समान है, लेकिन सभी कोण समान नहीं हैं।

आकृति 1(स) में, न तो भुजाओं की लंबाई समान है न ही उसके कोणों में कोई समानता है। इस प्रकार हमने देखा कि प्रथम आकृति, अन्य दो की तुलना में अधिक विशेष है। ऐसी बहुभुजीय आकृति, जिसकी सभी भुजाओं की लंबाई तथा सभी कोण समान हों, 'सम-बहुभुज' (regular polygon) कहलाती है। चित्र-1अ, में दर्शाए बहुभुज की पांच भुजाएं होने के कारण, इसे सम-पंचभुज कहते हैं।

हम भुजाओं की भिन्न-भिन्न संख्या वाले, ऐसे अनेकानेक सम-बहुभुज बना सकते हैं। चित्र-2 में ऐसी ही कुछ और आकृतियां दर्शाई गई हैं।

चित्र-2अ में दिखाई गई आकृति, जिसे हम सभी समबाहु त्रिभुज के नाम से जानते हैं, से स्पष्ट होता है कि तीन से कम भुजाओं वाली बहुभुजीय आकृति संभव नहीं है। पाठक, अन्य तीन आकृतियों से भी परिचित होंगे। इन्हें क्रमशः वर्ग, सम-षट्भुज तथा सम-अष्टभुज कहते हैं। चूंकि बहुभुजों की भुजाओं की अधिकतम संख्या पर कोई प्रतिबंध तो है नहीं, इसलिए ऐसी बहुभुजीय आकृतियों की संख्या असंख्य है।

त्रिआयामी बहुफलक

अब तक हमने जिन आकृतियों की चर्चा की, वे सभी समतल ज्यामितीय हैं अर्थात दो आयामी हैं। अगला प्रश्न उठता है 'क्या इनके समतुल्य त्रिआयामी आकृतियां संभव हैं?' इस प्रश्न का उत्तर ही, इस लेख में, हमारी चर्चा का विषय है। तीन आयाम में भी, समतल बहुभुजों के तुल्यरूप आकृतियां पाई जाती हैं। इन ज्यामितीय आकृतियों को 'बहुफलक' कहते हैं। ऐसी ही दो आकृतियों को चित्र-3 में दिखाया गया है। समतलीय बहुभुज की ही भांति, त्रिआयामी

चित्र:2

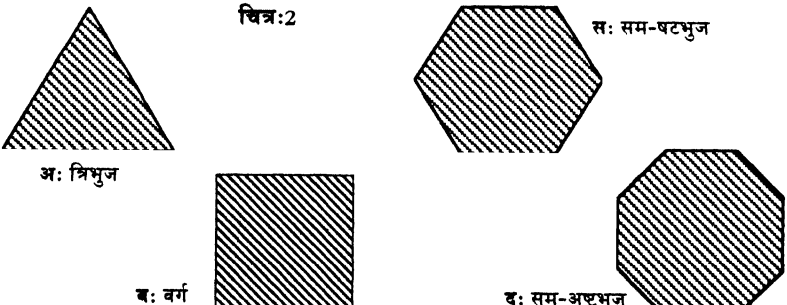

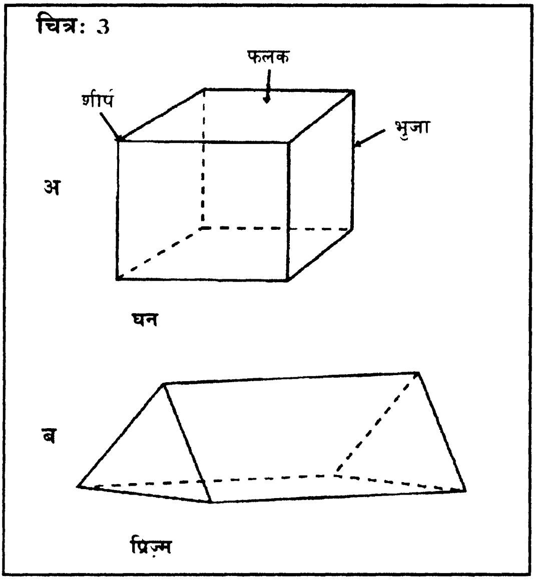

घन एवं प्रिज़्म: घन छः समान फलकों से बनी बहुफलकीय आकृति है। प्रिज़्म तीन आयताकार और दो त्रिभुजाकार फलकों से बनी बहुफलकीय आकृति है। घन जैसे बहुफलक में सममिति (Symmetry) के काफी सारे तत्व दिख रहे हैं जबकि प्रिज़्म में ऐसा नहीं है।

भी एक बंद ज्यामितीय आकृति है। यानी कि इसमें सब फलक आपस में जुड़कर एक बंद आकृति बनाते हैं। जिस प्रकार सरल रेखाओं से बहुभुज की रचना होती है, ठीक उसी प्रकार बहुभुजों से बहुफलक की रचना की जाती है। इसका प्रत्येक फलक एक बहुभुजीय आकृति होता है।

चित्र-3अ में दर्शाई गई आकृति को घन कहते हैं। इसके 6 फलक हैं। दूसरी आकृति, जिसे प्रिज़्म कहते हैं, के केवल 5 फलक हैं। इनका अवलोकन करने पर, दोनों में फर्क तुरंत दिख जाता है। घन अत्याधिक सममित (Symmetric) आकृति है और उसमें सब तल/फलक एक समान हैं। जबकि प्रिज़्म में ऐसा नहीं है। एक बहुफलक को उसके फलकों, भुजाओं तथा शीर्षों से परिभाषित किया जाता है। चित्र-3 में, इन्हें दर्शाया गया है। इन्हें ठीक से पहचानने के लिए पाठक स्वयं जांच कर लें कि

अ. चित्र-3अ में दर्शाए घन के 6 फलक, 12 भुजाएं तथा 8 शीर्ष हैं। इसके सभी फलक एक जैसे यानी वर्ग हैं।

ब. चित्र-3ब में दिए प्रिज़्म के 5 फलक, 9 भुजाएं तथा 6 शीर्ष हैं। इसके दो फलक त्रिभुजाकार हैं तथा शेष आयताकार हैं।

सम-बहुभुजों की भांति, बहुफलकों में भी सम-बहुफलक होते हैं। सम-बहूफलक उसे कहते हैं जिसके सभी

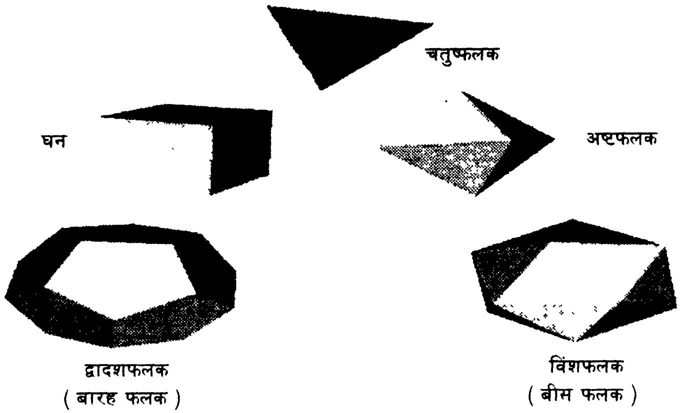

चित्र: 4

सम-बहुफलक: त्रिआयामी ज्यामिती में अनगिनत बहुफलक बनाए जा सकते हैं लेकिन जहां तक सम-बहुफलकों का सवाल है, केवल ऊपर दिखाई गई पांच आकृतियां ही संभव हैं। सम-बहुफलक यानी वो आकृति जो केवल एक जैसे सम-बहुभुजों से बनी हो और उसकी समस्त भुजाएं एवं शीर्ष भी समान हों।

फलक एक समान हों तथा सम-बहुभुजों से बने हों और सभी भुजाएं तथा शीर्ष भी समान हों।

पांच सम-बहुफलकीय आकृतियां

चित्र-4 में पांच सम-बहुफलकीय आकृतियों को दर्शाया गया है। इनके नाम प्रत्येक आकृति में फलकों की संख्या के अनुसार रखे जाते हैं—

चतुष्फलक, अष्टफलक, विंशफलक, घन तथा द्वादशफलक।

वस्तुत: इन आकृतियों को सम-चतुष्फलक, सम-अष्टफलक इत्यादि के नाम से पुकारना चाहिए, लेकिन बहुधा उपरोक्त नाम ही प्रयोग में लाए जाते हैं। इनके संदर्भ में, एक आश्चर्यजनक सत्य यह है कि ये पांचों आकृतियां ही संभव सम-बहुफलक हैं। इनके अतिरिक्त, अन्य कोई सम-बहुफलकीय आकृति बनाना संभव नहीं है। इस महत्वपूर्ण तथ्य की व्याख्या, हम आगे चलकर करेंगे। इससे पहले, इन पांचों सम-बहुफलकों से परिचय करते हैं।

इन पांचों को सम्मिलित रूप से 'प्लेटोनीय पिंड' भी कहा जाता है। निम्नलिखित तालिका में, पांचों

समबहुफलकों के मुख्य लक्षणों का विवरण दिया गया है। पाठकों से अपेक्षा है कि वे इन तथ्यों की जांच स्वयं भी करें।*

तालिका के प्रथम स्तम्भ में बहुफलक का नाम तथा दूसरे में फलक की बहुभुजीय आकृति का नाम दिया गया है। तीसरे, चौथे तथा पांचवें स्तम्भों में क्रमशः फलकों, भुजाओं तथा शीर्षों की संख्या का विवरण दिया गया है। छठे स्तम्भ में, बहुफलक की किन्हीं दो भुजाओं के परस्पर मिलान से बने कोणों का माप है तथा अंतिम स्तम्भ में बहुफलक के किसी भी शीर्ष पर मिलने वाले फलकों की संख्या दी गई है।

कितने सम-बहुफलक

आओ, अब हम यह जानने का प्रयत्न करें कि उपरोक्त पांच के अतिरिक्त अन्य कोई सम-बहुफलक संभव क्यों नहीं है। सर्वप्रथम, इस तथ्य की ओर ध्यान दें कि एक बंद आकृति पाने के लिए, किसी भी शीर्ष पर कम-से-कम तीन बहुभुजों का मिलना अत्यंत आवश्यक है। (सोचकर देखिए कि क्या यह सही है) दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि किसी भी शीर्ष पर बनाए गए समतलीय कोणों का कुल योग 360° से कम होना चाहिए। (सोचिए ऐसा क्यों?) इसका अभिप्राय यह है कि यदि हम समबाहु त्रिभुज

तालिका

समबहुफलक	फलक की आकृति	कुल फलक	भुजाएं	कुल शीर्ष	कोण	शीर्ष पर मिलने वाले फलक
चतुष्फलक	त्रिभुज	4	6	4	60°	3
अष्टफलक	त्रिभुज	8	12	6	60°	4
विंशफलक	त्रिभुज	20	30	12	60°	5
घन	वर्ग	6	12	8	90°	3
द्वादशफलक	पंचभुज	12	30	20	108°	3

* इन आकृतियों के मॉडल तैयार करना, पाठकों के लिए लाभदायक सिद्ध होगा। एकलव्य द्वारा प्रकाशित किताब 'खेल खेल में' (लेखक – अरविंद गुप्ता) भी मददगार साबित हो सकती है। इसमें माचिस की तीलियों से मॉडल बनाना सिखाया गया है। इस लेख के अंत में भी कागज़ द्वारा मॉडल बनाने के बारे में कुछ जानकारी दी गई है।

की सहायता से कोई सम-बहुफलक बनाना चाहें तो केवल 3, 4 या 5 त्रिभुज का ही एक शीर्ष पर मिल पाना संभव है। छः त्रिभुजों के एक शीर्ष पर मिलने से कोणों का कुल योग 360° हो जाएगा; जिससे बंद त्रिआयामी आकृति नहीं बन सकती। चित्र-5 में इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है। किसी शीर्ष पर मिलने वाले समबाहु त्रिभुजों की उपरोक्त तीन संभावनाओं से हमें क्रमशः चतुष्फलक, अष्टफलक तथा विंशफलक प्राप्त होते हैं। समबाहु त्रिभुजों के स्थान पर यदि वर्गों का उपयोग किया जाए तो केवल एक ही संभावना है कि हम तीन वर्गों को एक ही शीर्ष पर मिलाएं। ऐसा

चित्र: 5

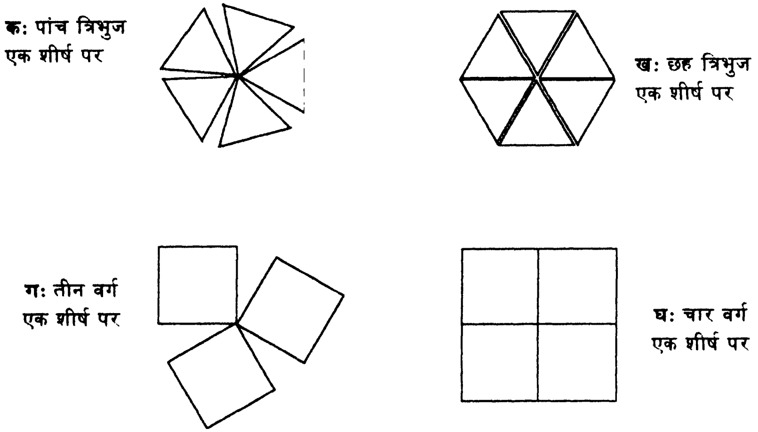

सम-बहुफलक की शर्तें: किसी सम-बहुभुज से त्रिआयामी बंद आकृति प्राप्त करने के लिए ज़रूरी है कि हर शीर्ष पर कम-से-कम तीन बहुभुज मिलें। दूसरी ज़रूरी शर्त है कि किसी शीर्ष पर मिलने वाले बहुभुजों द्वारा बनाए गए कोणों का योग 360 डिग्री से कम होना चाहिए। इन दोनों तथ्यों को ध्यान में रखकर अगर **क, ख, ग, घ,** को देखा जाए तो '**ख**' स्थिति में छः त्रिभुजों के एक शीर्ष पर मिलने से पहली शर्त तो पूरी हो गई लेकिन इन 6 त्रिभुजों द्वारा बनाए कोणों का योग 360 डिग्री हो जाता है। इससे हमें षटभुजी तल तो मिलता है लेकिन बंद आकृति नहीं; जबकि '**क**' में बंद आकृति मिलती है। इसी तरह '**घ**' में चार वर्गों के एक शीर्ष पर मिलने से एक वर्गाकार तल बन जाता है, जबकि '**ग**' में एक बंद आकृति यानी घन बनने की संभावना है।

नमक के क्रिस्टल: प्रकृति में पाया जाने वाला नमक बहुफलकों के नियमों का पालन करते हुए अपने क्रिस्टल बनाता है। चित्र में नमक के घनाकार क्रिस्टल दिखाई दे रहे हैं।

करने से हमें घन प्राप्त होता है। अंततः यदि हम सम-पंचभुज का उपयोग करें तो हमें परिणामस्वरूप द्वादशफलक प्राप्त होगा। पाठक इस बात पर ध्यान दें कि पांच से अधिक भुजाओं वाले सम-बहुभुज का उपयोग, एक समबहुफलक बनाने के लिए नहीं किया जा सकता। इस प्रकार, हमने देखा कि उपरोक्त पांच सम-बहुफलकीय आकृतियां ही संभव हैं।

लेकिन भिन्न-भिन्न प्रकार के बहुभुजीय फलकों को मिलाकर, हम निस्संदेह विभिन्न प्रकार के (विषम) बहुफलकों का निर्माण कर सकते हैं।

उदाहरणार्थ, चित्र-6 (पृष्ठ-31) में दर्शाई गई दो आकृतियों में प्रथम, एक जाना-पहचाना बहुफलक है जिसे 12 सम-पंचभुजों तथा 20 सम-षट्भुजों को मिलाकर बनाया गया है। वास्तव में, यही आकृति C-60 अणु की है। यह एक महत्वपूर्ण कार्बनिक अणु है जिसे हाल ही में खोजा गया है। यह 60 कार्बन परमाणुओं से मिलकर बना है। इस विशिष्ट अणु की बहुफलकीय आकृति में, प्रत्येक शीर्ष पर एक कार्बन परमाणु विद्यमान है। इस आकृति को 'बकीबॉल फुलरीन' के नाम से जाना जाता है।*

** फुटबॉल कार्बन के बारे में और जानकारी के लिए संदर्भ का अंक:18, जुलाई-अगस्त 1997 देखिए।*

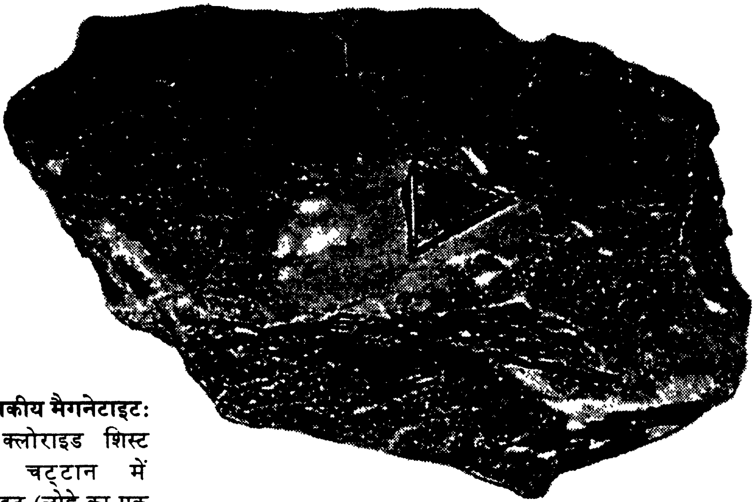

अष्टफलकीय मैगनेटाइट: टॉल्क क्लोराइड शिस्ट नामक चट्टान में मैगनेटाइट (लोहे का एक अयस्क) के अष्टफलकीय क्रिस्टल दिखाई दे रहे हैं।

अभी तक जिन पांच पिंडों की चर्चा की गई उन्हीं की भांति, किंतु उनसे भिन्न बहुफलकीय पिंडों का एक और समूह है जिन्हें 'आर्किमीडीय पिंड' कहा जाता है। उपरोक्त 'बकीबॉल' एक ऐसा ही आर्किमीडीय पिंड है। नीचे दी गई दूसरी आकृति भी आर्किमीडीय वर्ग की एक आकृति है जिसे 'स्नब घन' कहते हैं।

प्रकृति में भी सम-बहुफलक

यह बात विशेष रूप स उल्लखनीय है कि प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले कई पदार्थों की क्रिस्टल संरचना भी उपरोक्त सम-बहुफलकों जैसी ही होती है। हाल ही में खोजे गए विशेष पदार्थ, जिन्हें आभासी-क्रिस्टल (Quasi-crystals) कहते हैं, में बीस तल वाली विंशफलकीय संरचना पाई गई है।

सुंदर ज्यामितीय आकृतियां होने के साथ-साथ, बहुफलक कई प्रकार के विशिष्ट गणितीय गुणों से भी संपन्न हैं। हम ऐसे दो विशेष लक्षणों का वर्णन यहां करेंगे।

पाठक चाहें तो ऐसे अन्य गुणों को खोजने की कोशिश खुद कर सकते हैं। ये दो लक्षण इस प्रकार हैं–

1. तालिका में दिए विवरण की ओर ध्यान दें। तालिका की प्रत्येक पंक्ति में, एक बहुफलक विशेष का विवरण दिया गया है। बहुफलक विशेष के

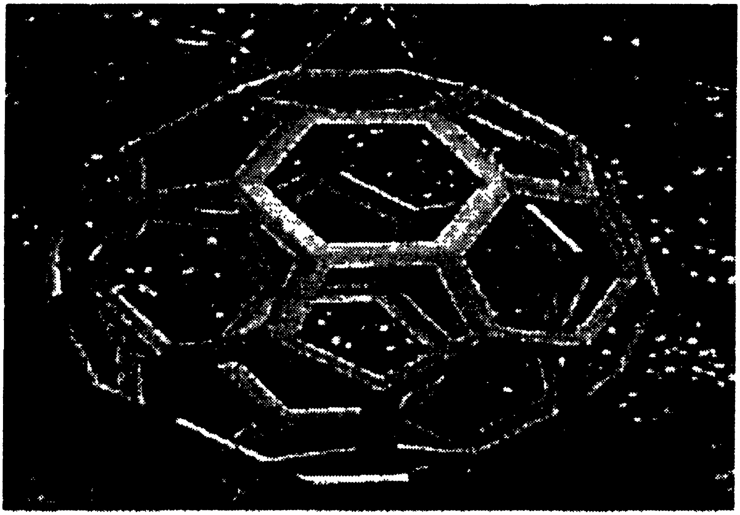

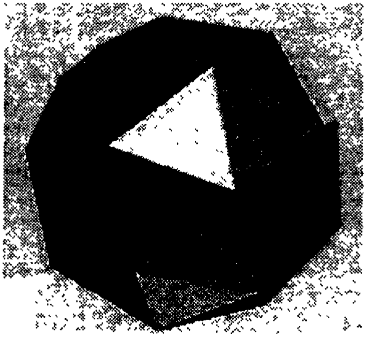

चित्र: 6 फुटबॉल कार्बन और स्नब क्यूब

ऊपर: 12 सम-पंचभुजों और 20 सम-षटभुजों से बना एक बहुफलक। यदि फुटबॉल के काले-सफेद चकतों पर गौर करें तो यही संरचना दिखाई देगी। इसलिए ऐसी ही रचना वाले कार्बन के अणु को फुटबॉल कार्बन नाम दिया गया।

दाएं: त्रिभुजों और चतुर्भुजों से बना एक बहुफलक जिसे स्नब क्यूब कहते हैं।

फलकों की संख्या को शीर्षों की संख्या में जोड़कर, भुजाओं की संख्या से घटाने पर सदैव 2 प्राप्त होता है।

2. किसी बहुफलक के किसी शीर्ष पर बने कुल समतलीय कोण को 360° में से घटाइए। सभी शीर्षों पर प्राप्त इस संख्या को परस्पर जोड़ने पर सदैव 720 प्राप्त होता है।*

सम बहुफलकों के संदर्भ में, जिन

* अगर शीर्ष एकदम चपटा हो तो वहां मिल रहे समस्त कोण का जोड़ 360 डिग्री होगा। इसलिए जब बहुफलक के किसी शीर्ष पर बने कुल समतलीय कोण को 360 डिग्री से घटाते हैं तो पता चलता है कि आकृति समतल से कितनी फर्क है।

गणितीय तथ्यों का हमने ऊपर उल्लेख किया, वे एक-दूसरे से संबंधित हैं। ये तथ्य, स्विटज़रलैंड के महान गणितज्ञ यूलर द्वारा प्रस्तावित एक सुंदर प्रमेय के फलस्वरूप हमें प्राप्त हुए हैं। आप यह जानने का प्रयत्न करें कि क्या ये आश्चर्यजनक तथ्य अन्य बहुफलकों, यथा प्रिज़्म, बकीबॉल इत्यादि के लिए भी सत्य हैं अथवा नहीं।

बहुफलकों का इतिहास

लेख के अंत में, हम प्लेटोनीय पिंडों तथा अन्य बहुफलकों के संबंध में कुछ ऐतिहासिक जानकारी प्रस्तुत करते हैं। जिन पांच सम-बहुफलकों का वर्णन हमने इस लेख में किया, वे कम-से-

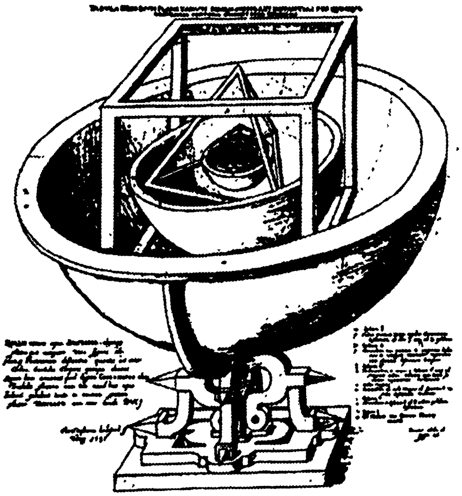

केपलर का मॉडल: जोहानेस केपलर (1571–1630) ने सौर्यमंडल के मॉडल को बनाने में समबहुफलकों का इस्तेमाल किया था। इस मॉडल में घन, चतुष्फलक ...... वगैरह की मदद से उस समय ज्ञात छह ग्रहों को दर्शाया गया था।

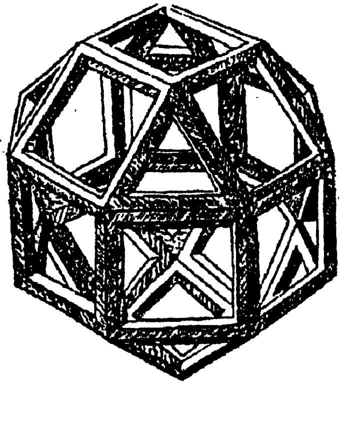

लियोनार्दो की कृति: अपने दौर के अग्रणी वैज्ञानिक, इंजीनियर व कलाकार लियोनार्दो द विंची ने भी त्रिभुजों और चतुर्भुजों की मदद से एक बहु फलकीय आकृति बनाई थी।

कम पिछले 2500 वर्षों से मानव सभ्यता के अंग हैं। यद्यपि, महान यूनानी दार्शनिक प्लेटो (400 ई.पू.) के नाम पर इन्हें प्लेटोनीय पिंड कहा जाता है लेकिन प्लेटो इन आकृतियों को खोजने वाले प्रथम व्यक्ति नहीं थे। पुरातात्विक उत्खनन के दौरान पाए गए कुछ बहुफलकीय पिंडों के 'क्ले मॉडल्स' की आयु, प्लेटो के समय से पहले की आंकी गई है। इन सुंदर एवं सममित (Symmetric) आकृतियों ने कलाकारों, दार्शनिकों तथा गणितज्ञों को सदैव आकृष्ट ही नहीं किया, वरन् उन्हें नए विचारों की तरफ प्रेरित भी किया। उदाहरणार्थ, सौरमंडल में ग्रहों की गतिविधियों की व्याख्या हेतु मॉडल तैयार करने के लिए, कैपलर (1571-1630 ई.) ने इन्हीं पांच प्लेटोनीय पिंडों का उपयोग किया था। उसके समय में मात्र छः ग्रहों की जानकारी थी। इसलिए, उसने सौरमंडल का जो प्रतिरूप तैयार किया, उसके अनुसार प्रत्येक ग्रह की कक्षा भिन्न-भिन्न गोलों पर थी जिनके केन्द्र एक ही जगह थे। इन छहों गोलों को पांच प्लेटोनीय पिंडों द्वारा पृथक किया गया था। यों तो सौरमंडल का वह प्रतिरूप सफल सिद्ध नहीं हुआ, लेकिन इससे हम वैज्ञानिकों की अद्भुत कल्पना शक्ति का अनुमान अवश्य लगा सकते हैं।

महान खगोलशास्त्री होने के साथ-साथ, कैपलर एक गणितज्ञ भी था। उसने व्यवस्थित रूप से, उस समय तक ज्ञात सभी बहुफलकों का अध्ययन किया तथा बहुत-सी नई बहुफलकीय आकृतियों की खोज भी की।

इसी प्रकार, महान कलाकार (साथ ही वैज्ञानिक, अभियंता और गणितज्ञ भी) लियोनार्दो द विंची (1452-1519 ई.) को भी ज्यामिती से प्रेम था।

बहुफलकों के विचित्र जगत की इस यात्रा को विराम करते हुए, हम आशा करते हैं कि इस लेख के माध्यम से हम पाठकों के सम्मुख बहुफलकों की संक्षिप्त जानकारी के साथ-साथ, उन्हें इस अद्भुत जगत में स्वयं विचरण करने को प्रेरित कर सकें।

सम-बहुफलकों के कागज़ी मॉडल बनाना

अगले तीन पृष्ठों पर बहुफलकों के कागज़ी मॉडल बनाने के लिए रेखाचित्र दिए गए हैं। आप सभी रेखाचित्रों को किसी अन्य कागज़ पर ट्रेस कर लीजिए। इस ट्रेसिंग की बाहरी लाइनों को कैंची से काट लीजिए। जहां-जहां दोहरी रेखाएं हैं वह जगह बहुफलक बनने पर चिपकाने में मदद देंगी। फिर अंदर दिए गए चौकोन, त्रिकोनों आदि के हिसाब से कागज़ को मोड़ते जाइए। कोशिश कीजिए, आप आसानी से पांचों प्लेटोनीय सम-बहुफलक खुद बना लेंगे।

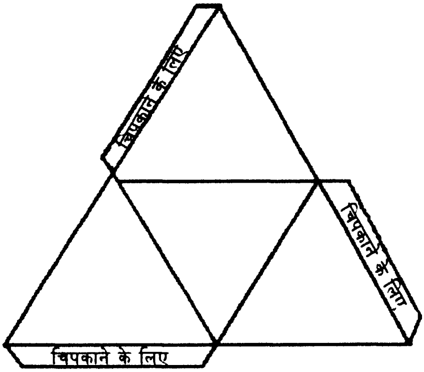

रेखाकृति

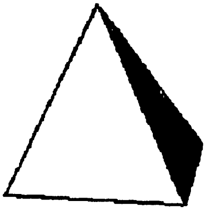

बनने वाला मॉडल

रेखाकृति

बनने वाला मॉडल

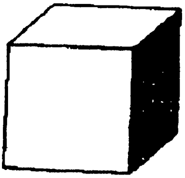

रेखाचित्र को बाहरी रेखाओं के पास से काटते हैं। फिर अंदर दी गई रेखाओं के सहारे मोड़ते हुए साथ दिया गया बहुफलक बनाने की कोशिश करनी है। हर एक रेखाचित्र में चिपकाने में मदद देने वाली पट्‌टी न काटने का ध्यान रखना है।

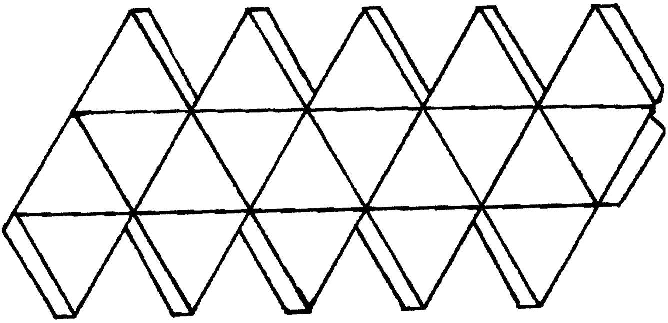

रेखाकृति

बनने वाला मॉडल

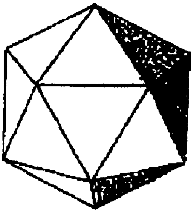

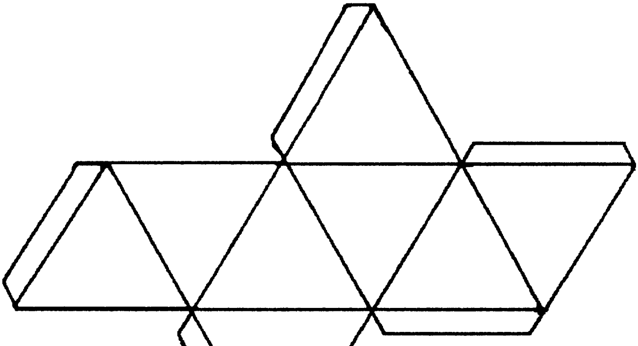

रेखाकृति

बनने वाला मॉडल

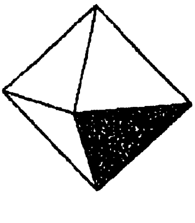

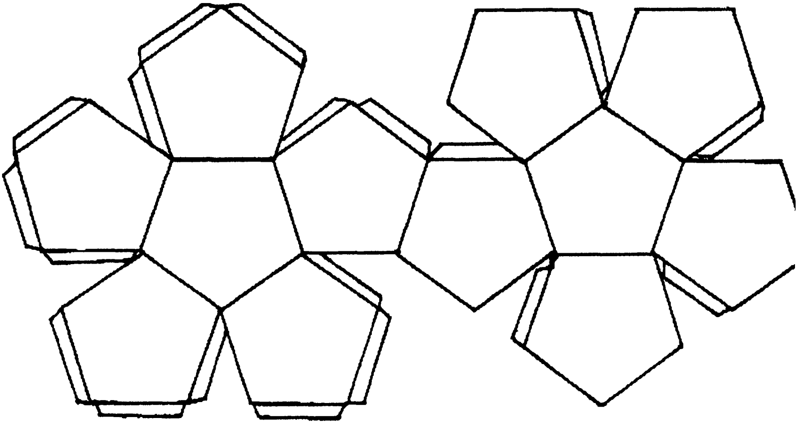

रेखाकृति

बनने वाला मॉडल

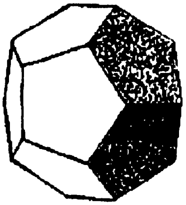

अभिषेक धर: मुंबई के टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च में शोध पूरा करने के बाद अब बेंगलौर के 'इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ सांइसेज़' से पोस्ट डॉक्टरेट कर रहे हैं।

अनुवाद: ब्रजेश कुमार। बेंगलौर के 'इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ सांइसेज़' से संबद्ध।

कागज़ी मॉडल: अरविंद गुप्ता की किताब 'खिलौनों का बस्ता' से लिए गए हैं।

परीक्षाएं और सिर्फ परीक्षाएं

मौजूदा परीक्षा प्रणाली में बच्चों की समझ को जांचने की बजाए उनकी रटंत क्षमता की जांच की जाती है। आपने भी कई बच्चों को सुबह-सुबह चार बजे सवालों के जवाब याद करते हुए देखा होगा।
क्या ऐसी परीक्षाओं के माध्यम से बच्चों की समझ को जांचा-परखा जा सकता है?

कैरेन हैडाक

परीक्षाओं को लेकर सबकी कोई-न-कोई शिकायत रहती ही है। इतनी प्रतिस्पर्धात्मक। कैसे विचित्र सवाल होते हैं। अन्याय और असमानता। जांचने की त्रुटियां। पाठ्यक्रम के बाहर के सवाल। और बच्चे तो पूछते हैं – उन्हें परीक्षा देनी ही क्यों पड़ती है?

लेकिन शिकायत करने वाले अक्सर निराश और जो उन पर गुज़र रही है उसे सहन कर लेने वाले लोग होते हैं। किसी में भी स्थिति को सुधारने की, बदलने की इच्छाशक्ति नहीं। या फिर ये सारी परीक्षाएं आवश्यक कुरीतियां हैं? जिन्हें हम सबको सहन करना ही होगा।

बच्चों के पास खेलने का समय ही नहीं – उनकी ज़िंदगी तो यूनिट टेस्ट, वार्षिक परीक्षा और जैसे कि वे काफी न हो बोर्ड परीक्षा के आतंक एवं अन्य अनगिनत प्रतियोगी परीक्षाओं से नियंत्रित रहती है। कई जगह तो बच्चे अपनी काबिलियत को परीक्षा के परिणामों के आधार पर नापने लगते हैं और पालक भी अपने बच्चों को इन्हीं परिणामों के अनुपात में प्यार करने लगते हैं। इस सबका असर काफी हानिकारक हो सकता है।

संपूर्ण परीक्षा व्यवस्था ने शिक्षा तंत्र को बुरी तरह से जकड़कर रखा है। शालाएं अपना पढ़ाने का तरीका नहीं बदल सकतीं, न ही पाठ्यक्रम बदल सकती हैं, क्योंकि उनका उद्देश्य है विद्यार्थियों को परीक्षा के लिए तैयार करना। मां-बाप को भी बच्चों को ट्यूशन के लिये भेजना पड़ता है ताकि वे परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त कर सकें। विद्यार्थी स्वयं तो जैसे परीक्षा के लिए सोचना होता है उससे हटकर और कुछ सोच ही नहीं सकते।

रटना बनाम पढ़ना

परीक्षाओं के लिए किस तरह की सोच ज़रूरी होती है? अक्सर केवल 'रटना'। विद्यार्थी उत्तरों को शब्दशः रटते हैं। वे उत्तर जिन्हें वे पाठ्यपुस्तक व श्यामपट से उतारते हैं। अगर कोई उनसे पूछे कि क्या कर रहे हैं तो वे कहेंगे 'पढ़ रहे हैं' या पुनरावृत्ति कर रहे हैं। लेकिन वास्तव में यह एक कहने का तरीका है जिसमें 'रट रहे हैं' कहने के बजाए 'पढ़ रहे हैं' कहा जाता है।

रटना 'पढ़ने' या 'सीखने' के समकक्ष नहीं है – केवल सीखने का एक हिस्सा मात्र है। लेकिन सीखने में इतना कुछ और भी शामिल है – सीखने के इतने पहलू हैं जिन पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया जाता।

याद करने के अलावा ज़रूरी है कि विद्यार्थी चीज़ों को समझें। उन्हें ज़रूरत है कि चीज़ों को करने के रचनात्मक और नए तरीके सोचें। उनमें क्षमता होनी चाहिए कि अपनी समझ और ज्ञान को नई समस्याएं सुलझाने में, इस्तेमाल कर पाएं; किसी घटना को अलग-अलग दृष्टिकोण से आंककर उसके बारे में मन बना पाएं और समस्याओं का विश्लेषण करके उन्हें हल करने के नए रचनात्मक तरीके सोच पाएं।

लेकिन अधिकांश परीक्षाओं में इस क्षमता को नहीं जांचा जाता। हम अपनी वर्तमान परीक्षा प्रणाली में फंसे हैं जो कि विद्यार्थियों को रटने के अलावा कुछ भी और करने से हतोत्साहित करती है। और रटना हर चीज़ में लागू किया जाता है – बगैर सोचे कि कुछ जगहों यह उपयुक्त होता है (जैसे पहाड़े याद करने पड़ते हैं) और कुछ जगह यह बिल्कुल उपयुक्त नहीं है – जैसे विज्ञान समझने में, आदि।

किसी ने परीक्षा की दिक्कतों के बारे में गहराई से सोचा हो, गूढ़ विश्लेषण किया हो, बहुत कम ही सुनने को मिलता है। कुछ लोग बढ़ती जनसंख्या को दोष दे देते हैं, कुछ अंग्रेज़ों की विरासत कहकर

उसके बारे में फिर सोचते ही नहीं। या फिर इस तरह के जुमले सुनने को मिलते हैं – 'इस व्यवस्था में इतनी प्रतिस्पर्धा इसलिए है क्योंकि बेरोज़गारों की अपेक्षा नौकरियां कम हैं। इसके बारे में हम क्या कर सकते हैं? जो विद्यार्थी अंग्रेज़ी अच्छे से नहीं जानता वह भोगेगा क्योंकि अंग्रेज़ी आज के दौर में अत्यंत ज़रूरी है। उसके बारे में भी कुछ नहीं कर सकते।'

असल में, परीक्षा प्रणाली ऐसी ही है क्योंकि इससे एक उद्देश्य पूरा हो रहा है बल्कि ऐसा कहिए कि बहुत ही अच्छी तरह पूरा हो रहा है। इससे छंटाई हो रही है – वे चंद योग्य विद्यार्थी छंट रहे हैं जो समाज के उस तबके की अगली पीढ़ी बनेंगे जो समाज का नेतृत्व करती है; जो समाज की सीढ़ी पर सर्वोपरि स्थान ग्रहण करते हैं।

परीक्षा और समाज का ढांचा

इस परीक्षा प्रणाली को बदलने से समाज की इस सीढ़ीदार संरचना के टूटने का खतरा हो सकता है। इसी कारण, यह तब तक नहीं बदल पाएगी जब तक वे लोग इसकी मांग न करें जो इससे पीड़ित हैं।

उदाहरण के लिए, हम चाहते हैं कि मेडिकल की परीक्षा कम प्रतिस्पर्धात्मक हो। इसका अभिप्राय है कि हम मेडिकल के विद्यार्थियों की संख्या बढ़ाना चाहते हैं – डॉक्टरों की संख्या बढ़ाना चाहते हैं। लेकिन ये डॉक्टरों के हित में नहीं है क्योंकि जहां डॉक्टरों की संख्या बढ़ी, उनके रहन-सहन का स्तर गिर जाएगा। इससे सामाजिक सीढ़ी पर उनकी जगह काफी नीचे आ जाएगी।

इसलिए असली चर्चा इस स्तर पर होनी चाहिए कि हम किस तरह का समाज चाहते हैं – क्या ऐसा जिसमें एक छोटा समूह धन, स्वास्थ्य, सत्ता आदि पर कब्ज़ा जमाए रहता है या ऐसा समाज जो सभी लोगों के लिए अच्छी स्वास्थ्य सेवाएं देने की ज़िम्मेदारी उठाता है।

क्या हम वास्तव में ऐसा समाज चाहते हैं जो रचनात्मक लेखन, वैज्ञानिक सोच, समान खाद्यान्न वितरण, और पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधाओं को प्रोत्साहन देता हो? तो फिर हमारी शिक्षा प्रणाली भी ऐसी होनी चाहिए जो रचनात्मक सोच को बढ़ावा दे, जो प्रयोग-धर्मिता को प्रोत्साहित करे, जो लोकव्यापी हो, जो समानतामूलक शिक्षा पर ज़ोर दे।

अगर परीक्षा प्रणाली को रटंतू से बदलकर ऐसा बना दिया जाए कि

विद्यार्थियों की समझ के स्तर, नई समस्याओं का विश्लेषण कर पाने की क्षमता, समीक्षात्मक सोच और विश्लेषण आदि का मूल्यांकन हो – तो वो मौजूदा व्यवस्था के लिए खतरा बन जाएगी। आखिर आम जनता की रचनात्मक क्षमताओं और सोच को बौना बनाए रखना सत्ताधारियों के हित में ही तो है।

शायद ये प्रणाली बदल जाएगी जब सत्ताधारी यह समझने लगेंगे कि विद्यार्थियों को सोचना सिखाने से शायद उनकी अपनी स्थिति भी सुधरेगी। तब शायद वे ऐसी दोहरी प्रणाली बना लेंगे जिसमें साधारण लोग तो रटकर याद करते रहें; और अंग्रेज़ी बोलने वाली उच्च श्रेणी को और ऊंचे स्तर पर सोचना सिखाया जाए। इसके आसार नज़र आने भी लगे हैं। गैर-सरकारी अंग्रेज़ी माध्यम वाले स्कूलों और नज़रअंदाज़ किए गए सरकारी स्कूलों की तुलना कीजिए। क्या गैर-सरकारी स्कूलों पर प्रतिबंध लगा देना ही एकमात्र तरीका है सरकारी स्कूलों को सुधारने का, इन दोनों के बीच की बढ़ती खाई को बढ़ने से रोकने का?

लेकिन आज भी बहुतेरे अत्यंत रचनात्मक लोग ऐसे हैं जो शिक्षा प्रणाली से नहीं गुज़रे – जिन्होंने इन परीक्षाओं को उत्तीर्ण नहीं किया। इन्हें खुद को अभिव्यक्त करने के, और बाकी दुनिया से संवाद करने के बहुत कम मौके मिले हैं। हमें आज ज़रूरत है ऐसी व्यवस्था की जो हर इन्सान को विकसित होने की, खुद को अभिव्यक्त करने की और अपनी व्यक्तिगत और सामाजिक रुचियों को बढ़ावा देने की इजाज़त दे, जगह दे।

परीक्षाएं बदली कैसे जा सकती हैं?

- यदि परीक्षा हो ही न तो? कभी-कभी परीक्षा ज़रूरी भी नहीं होती किसी और तरह से आंकना ज़्यादा ठीक रहता है। उदाहरण के लिए किसी रचनात्मक लेख या पेंटिंग का मूल्यांकन करना।
- कहीं-कहीं परीक्षा की उपयोगिता नज़र आती है। विद्यार्थियों को व औरों को भी एक अंदाज़ा लग जाता है कि उनकी उपलब्धियां क्या हैं, उनके समझने का स्तर क्या-क्या है। इससे उन्हें आगे की पढ़ाई की योजना बनाने में, व्यवसाय चुनने में मदद मिलती है। लेकिन मूल्यांकन के और भी तरीके हो सकते हैं।
- यदि शिक्षकों के सुझाव और टिप्पणियों का उपयोग किया

जाए तो? यदि शिक्षक हर विद्यार्थी के बारे में अच्छे से सोचकर एक समीक्षात्मक विवरण लिखे जिससे कि उसकी उपलब्धियों और विशेषताओं के बारे में पता लगे, तो क्या वह महज़ 87 प्रतिशत, 55 प्रतिशत लिखने से ज़्यादा सार्थक न होगा?

- यदि खुली-किताब परीक्षाएं हों तो? विद्यार्थी परीक्षा में अपनी किताबों व कॉपियों का भी प्रयोग कर सकें। फिर सवाल इस प्रकार के होंगे कि वे सीधे-सीधे किताबों से नकल करके उत्तर न लिख पाएं; बल्कि किताब में दी गई जानकारी की मदद से वे नए सवालों को हल करने की कोशिश करें। (नीचे कुछ उदाहरण दिए गए हैं।)

मौखिक परीक्षाएं, चर्चाएं, इंटरव्यू के बारे में क्या विचार हैं? कहीं-कहीं उनकी उपयोगिता ज़्यादा लगती है। उदाहरण के लिए, एक विद्यार्थी से पांच मिनट बात करके शिक्षक आसानी से बता सकता है कि उसे व्याकरण की कितनी पकड़ है, क्या वह किसी भाषा में सही वाक्य बना सकता है या नहीं। क्या परीक्षाओं का इस्तेमाल 'याद्दाश्त' से भी ज़्यादा कुछ जांचने में हो सकता है? इन परीक्षाओं से कुछ और ऊंचे स्तर की चीज़ें जैसे समीक्षात्मक चिंतन जैसी दक्षताओं को कैसे आंकेंगे?

नीचे दिए गए सवालों के उदाहरण देखिए। हर जगह पहला सवाल पुराने साधारण तरीके से पेश किया गया है। फिर उसी विषय को आंकने के लिए एक और सवाल दिया है जिसमें कहीं अधिक सोचने की आवश्यकता है।

रसायन एवं गणित

1. पीतल निम्नलिखित में से किसी एक का मिश्रण है—

क. *70 प्रतिशत तांबा और 30 प्रतिशत जस्ता*

ख. *35 प्रतिशत जस्ता और 65 प्रतिशत तांबा*

ग. *65 प्रतिशत तांबा और 35 प्रतिशत सीसा*

घ. *38 प्रतिशत जस्ता और 62 प्रतिशत तांबा*

2. पीतल एक मिश्रधातु है। धातुओं के मिश्रण को मिश्रधातु कहते हैं। पीतल 65 प्रतिशत तांबा और 35 प्रतिशत जस्ते के मिश्रण से बनता है। कौन-सा चित्र इसको सबसे स्पष्ट दर्शाता है?

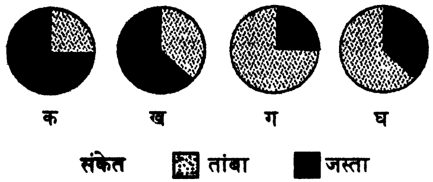

पहला सवाल सिर्फ याद्दाश्त को जांचता है। दूसरा सवाल कुछ जानकारी देता है और जानकारी को समझने को कहता है। इसमें विद्यार्थी को ज़रूरत है पहले सीखी हुई क्षमता, यानी इस तरह के चित्रण को समझने का इस्तेमाल करे। इसमें दी हुई जानकारी को समझना, नक्शा पढ़ने की क्षमता संकेत सूची पढ़ने के लिए, प्रतिशत और भिन्न की समझ, आकारों में तुलना करके अनुमान लगाना, समझना कि 25 प्रतिशत एक चौथाई होता है, 35 प्रतिशत एक-तिहाई से थोड़ा ज़्यादा होता है आदि, सभी की जांच होती है। तो दूसरा सवाल वास्तव में ज़्यादा चीज़ें जांच रहा है। सबसे ज़रूरी बात यह है यह विद्यार्थियों की सोचने की क्षमता को जांच रहा है।

इससे अभिप्राय यह नहीं है कि याद करना महत्वपूर्ण नहीं है। कई चीज़ें याद भी करनी पड़ती हैं। लेकिन खुद से ये सवाल भी करना चाहिए कि उदाहरण के लिए यह याद रखना कितना ज़रूरी है कि पीतल में कितना तांबा और कितना जस्ता मिला होता है। शायद यह समझना/सीखना ज़्यादा सार्थक होगा कि ऐसी जानकारी ढूंढने के लिए पुस्तकालय का उपयोग कैसे कर सकते हैं। और वहां यदि किसी पुस्तक में ऐसे ग्राफ बने हों तो उन्हें पढ़कर कैसे समझ सकते हैं।

भूगोल

1. *नक्शा क्या है?*

   जवाब– पृथ्वी की सतह को छोटे रूप में समतल सतह पर दिखाया जाए तो उसे नक्शा कहते हैं।

2. अपने एटलस के विभिन्न नक्शों को देखकर पता लगाओ कि गंगा नदी कौन-कौन से राज्यों से होकर समुद्र में मिलती है?

विद्यार्थी के लिए पहले सवाल का सही उत्तर केवल याद्दाश्त के आधार पर बिना हिज्जे की गलतियां किए, बिना ये समझे भी कि नक्शा वास्तव में क्या चीज़ है, देना संभव है। लेकिन अगर कोई विद्यार्थी दूसरे सवाल का उत्तर दे सकता है तो उससे यह भी साबित होगा कि उसे मालूम है नक्शा क्या है, क्योंकि उसे नक्शा इस्तेमाल करना आता है। शायद इसके लिए उसे कुछ राज्यों के नाम भी रटने पड़ें (यदि नक्शे पर नाम नहीं लिखे

हों तो) – लेकिन वह सिर्फ याद रखने से कहीं ज़्यादा कर रहा है। उसे संकेत सूची पढ़ने की आवश्यकता हो सकती है, उसे नक्शा देखकर समझना पड़ सकता है कि नदी किस ओर बह रही है आदि।

अंग्रेज़ी

1. *टॉम सॉयर को (स्कूल में) अपनी कक्षा में ---- पसंद था। उसका सबसे अच्छा दोस्त ---- था।*
2. कल्पना करो कि टॉम सॉयर आज के ज़माने में रहने वाला एक भारतीय है और तुम्हारे शहर में रह रहा है, न कि उन्नीसवीं सदी में मिसिसिपी नदी के किनारे। उसकी ज़िन्दगी कैसे फर्क हो जाएगी? मान लो उसका नाम राम सॉयर है और वह तुम्हारे स्कूल जाता है। जिस पाठ में टॉम सॉयर की दिक्कतों के बारे में लिखा है उसे भारतीय संदर्भ में पुनः लिखो।

ज़ाहिर है, पहले प्रश्न की तुलना में दूसरे प्रश्न में बहुत कुछ पूछा जा रहा है। पहले प्रश्न का उत्तर देने के लिए पात्रों के नाम याद रखना ज़रूरी था। बहुत ज़्यादा कुछ समझने की ज़रूरत नहीं। दूसरे सवाल का उत्तर देने के लिए याद्दाश्त के साथ-साथ विद्यार्थी को अपनी रचनात्मकता और विश्लेषण की क्षमताओं को दिखाने का मौका मिलता है। कुछ लोगों को यह मुश्किल लग सकता है। लेकिन क्या वाकई इतना मुश्किल है यह?

शायद कुछ शिक्षकों ने बच्चों से वाक्य रटने की बजाए अपने शब्दों में लिखने को कहा होगा और पाया होगा कि वे हिज्जों में, व्याकरण में, वाक्य संरचना में बहुत गलतियां करते हैं। फिर भी, रचनात्मक और विश्लेषणात्मक पहलुओं को अलग से क्यों न देखा जाए? यदि हिज्जे और व्याकरण पर ज़्यादा ध्यान न दें, तो मुझे यकीन है कि हम पाएंगे कि बच्चे खुद से सोच सकते हैं। और इसे शुरू से ही प्रोत्साहन देने की ज़रूरत है वरना यह क्षमता हमेशा के लिए खत्म हो जाएगी। और फिर रटने से तो बच्चे कभी भी वाक्य संरचना नहीं सीख पाएंगे। सीखने के लिए उन्हें खुद से लिखना होगा, गलतियां करनी होंगी, खुद सुधारनी होंगी, अभ्यास करना होगा।

विज्ञान

1. *दूध को ज़्यादा समय तक सुरक्षित रखने के लिए इस्तेमाल होनेवाली विधि को – ---- कहते हैं।*
2. आठ डिब्बे लो और उन पर 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8 संख्या

लिख दो। डिब्बा क्रमांक 1, 2, 3, 4, में बिना उबला, ताज़ा दूध लो। डिब्बा क्रमांक 5, 6, 7, 8, में गर्म, उबला हुआ दूध लो। सब डिब्बों को ढक दो। डिब्बा क्रमांक 1 व 5 को फ्रीज़र में रखो 2 एवं 6 फ्रिज में, 3 एवं 7 को अलमारी में, और 4 और 8 को ऐसी जगह जहां धूप आती हो।

24 घंटे बाद सब डिब्बों को खोलकर सूंघों– क्या कोई खट्टा हो गया है? यदि नहीं तो और 24 घंटों के लिए इन्हें वापस रख दो। फिर सूंघो। जब तक दूध खट्टा न हो जाए ऐसा करते रहो।

अपने अवलोकन एक तालिका में लिखो और स्तंभालेख से दिखाओ कि हर एक डिब्बे के दूध को खट्टा होने में कितने दिन लगे। अपने नतीजों के आधार पर बताओ कि दूध को लंबे समय तक ठीक रखने का सबसे अच्छा तरीका क्या है? क्या इस प्रयोग को किसी और विधि से बेहतर ढंग से किया जा सकता है?

पहले सवाल का उत्तर देने में विद्यार्थी को मात्र एक शब्द की परिभाषा याद करनी है, इसे समझना भी ज़रूरी नहीं।

दूसरे प्रश्न के लिए उसे कम-से-कम दो दिन आधा-आधा घंटा विज्ञान को करने में लगाना पड़ेगा। लेकिन इस अनुभव को वे शायद ही भूलेंगे। वे 'दूध परीरक्षण' के अर्थ के अलावा भी कई चीज़ें सीखेंगे। वे सीखेंगे विज्ञान क्या है – सिर्फ जानकारियों/तथ्यों की सूची नहीं जिसे रटना पड़ता है। उन्हें वैज्ञानिक तरीका समझ में आएगा – प्रश्न करना, परिकल्पना बनाना, प्रयोग करना, अवलोकन करना, और नतीजे तक पहुंचना। शिक्षक को समझ में आएगा कि क्या विद्यार्थी बारीकी से अवलोकन कर पा रहा है, क्या उसे ग्राफ बनाना आता है, क्या वह आंकड़ों का विश्लेषण कर खुद नतीजे तक पहुंच सकता है?

कैरन हैडॉक: चंडीगढ़ के एक स्कूल में अध्यापनरत; चित्रकार; बायोफिज़िक्स में शोधकार्य।
अनुवाद: शिवानी बजाज, एकलव्य के प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम से जुड़ी हैं।

एकबीजपत्री बीजों में जपत्र

स्निग्धा मित्रा

जितनी आसानी से भीगे हुए चने में बीजपत्र, अंकुर, प्रांकुर देखा जा सकता है, क्या उतनी ही सहजता से मक्के में भी बीजपत्र दिखाई देते हैं? शायद मामला थोड़ा फर्क है . . . सवाल शायद यह है कि आखिर बीजपत्र है क्या?

चना, मूंग, तूअर आदि का बीज लिया और बस उसे तोड़ने या भीगो कर खोलने भर से दोनों बीजपत्र दिख जाते हैं। यही नहीं, भिगोए हुए बीज में तो अंकुर यानी मूलांकुर और प्रांकुर भी अक्सर बहुत स्पष्ट होते हैं। आमतौर पर जितने सहज सरल तरीके से द्विबीजपत्री बीज में ये सब दिख जाते हैं क्या उतनी ही सरलता से किसी एकबीजपत्री बीज में अंकुर और बीजपत्र दिखाए जा सकते हैं?

मोटे तौर पर समझ यही है कि जिन बीजों में एक बीजपत्र पाया जाता है वे एकबीजपत्री कहलाएंगे और द्विबीजपत्री समूह के बीज में दो बीजपत्र होते हैं। अक्सर यह वर्गीकरण सिर्फ बीजपत्र की संख्या के आधार पर ही नहीं मगर कई अन्य गुणों को भी ध्यान में रखते हुए – जैसे कि जड़ का प्रकार, पत्तियों का विन्यास इत्यादि से जोड़कर – किया जाता है।

द्विबीजपत्री बीज का अध्ययन अगर आप करना चाहें तो सेम, अरंडी, चना इत्यादि बहुतेरे उदाहरण हैं जिनमें आप स्पष्ट रूप से बीजपत्र और अंकुर देख सकते हैं। मगर एकबीजपत्री समूह में अध्ययन करने हेतु आपके पास ज़्यादा विकल्प नहीं हैं। अगर सुपारी, खजूर इत्यादि लें तो बीज इतना कठोर है कि उसे काटना ही मुश्किल होगा। गेहूं और धान तो बहुत छोटे हैं और कठोर भी। फिर आपके पास बचता है, मक्का

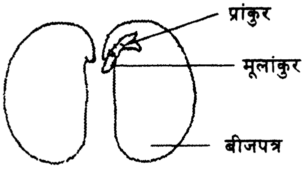

सेम के बीज

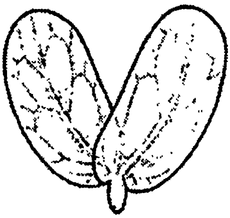
अरंडी के पतले-पतले बीजपत्र

द्विबीजपत्र बीज के दो उदाहरण: सेम के बीज को खोलने पर बीजपत्र के साथ जुड़ा हुआ अंकुर दिखाई दे रहा है। जिस हिस्से से जड़ बनेगी उसे मूलांकुर कहते हैं और जिससे तना बनेगा उसे प्रांकुर; मूलांकुर और प्रांकुर को मिलाकर अंकुर कहते हैं। और अंकुर व बीजपत्र मिलकर भ्रूण (Embryo) कहलाते हैं। सेम के बीजपत्र अंकुर की तुलना में काफी बड़े व पोषक पदार्थों से युक्त होते हैं। चना, सेम, मूंग, तूअर जैसे बीजों में पौधे को शुरुआती विकास के लिए भोजन बीजपत्र में मौजूद पोषक पदार्थों से ही प्राप्त होता है, जब तक कि पौधा अपना भोजन खुद न बनाना शुरू कर दे।

अरंडी का बीज खोलने पर भी बीज के दो भाग तो हो जाते हैं परन्तु अंदर की रचना काफी फर्क होती है। इसमें बीजपत्र बहुत ही पतले-पतले होते हैं और उनके बाहर की ओर बीज का दलदार हिस्सा दरअसल में भ्रूणपोष है यानी वो हिस्सा जो भ्रूण को पोषक पदार्थ देगा। अरंडी जैसे बीजों में बीजपत्रों में खुद के पास पोषक पदार्थ नहीं होता परन्तु वे भ्रूणपोष से इन्हें लेकर अंकुर तक पहुंचाते हैं। चीकू का बीज भी ऐसा ही एक और उदाहरण है। यह आसानी से घुल जाता है और उसमें भ्रूणपोष से चिपके हुए पतले-से बीजपत्र आसानी से दिख भी जाते हैं और थोड़ा-सा खरोंचकर अलग निकाले जा सकते हैं।

जिसके विस्तृत अवलोकन दिखाते हुए अंदरुनी संरचना के चित्र कई किताबों में मिल जाते हैं। चलिए देखते हैं कि पुस्तकों में क्या विवरण मिलता है और बीजपत्र कहां होता है उसमें। अगर साथ में खुद भी प्रयोग कर पाएं तो और भी मदद मिलेगी।

इसके लिए किसी ताज़े भुट्टे में से कड़े बीज निकाल लीजिए या पूरे दो दिन तक भिगोए हुए मक्के के बीज लीजिए। जिस तरफ आपको पीले भाग में धंसा हुआ सफेद भाग नज़र आए और सफेद भाग के बीच में एक रेखा-सी दिखे, बीज के ऊपर से ब्लेड द्वारा उसी तरफ का एक पतला-सा हिस्सा काट लीजिए। इस पतली काट पर आप

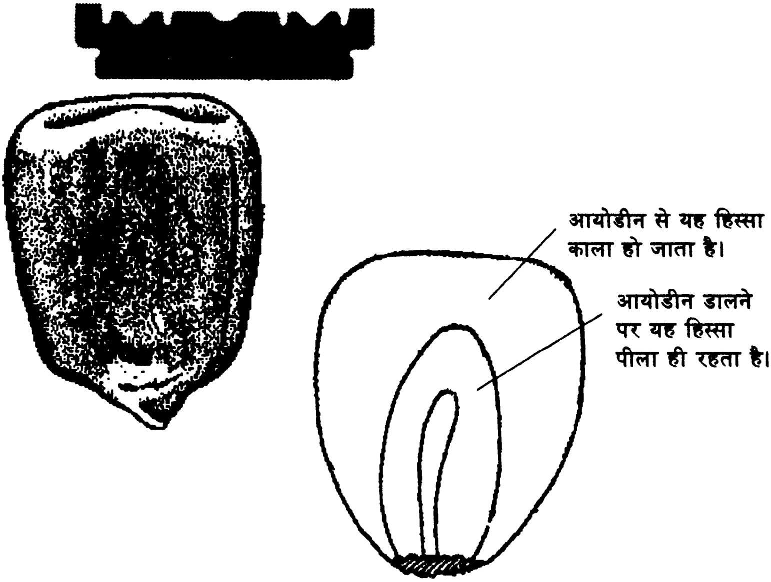

मक्के के बीज की काट: मक्के के पानी में भिगोए बीज को चित्रानुसार जमाकर किसी ब्लेड की मदद से खड़ी काट लेनी है। इसके बाद इस काट पर आयोडीन के हल्के घोल की दो-तीन बूंदें डालकर थोड़ी देर इंतज़ार कीजिए। जिस भाग का रंग काला हो जाता है वह भ्रूणपोष है और जिस हिस्से का रंग पीला ही रहता है वह भ्रूण है।

आयोडीन के हल्के घोल की कुछ बूंदें टपका दीजिए। बीज का एक हिस्सा काला हो जाएगा जबकि एक हिस्सा पीला-सा रहेगा। इसी पीले हिस्से के बीचों-बीच एक रेखा-सी नज़र आएगी।

जो हिस्सा पूर्ण रूप से काला हो गया है वह तो भ्रूणपोष है। अंकुर के लिए पोषक पदार्थ इसी हिस्से में होता है। अनाज वाले बीजों में यह पोषक पदार्थ खासतौर से मण्ड के रूप में पाए जाते हैं। अन्य बीजों में मण्ड के अलावा प्रोटीन या वसा के रूप में भी पोषक पदार्थ मिल सकता है।

अब सवाल उठता है कि मक्का के बीज में आखिर बीजपत्र कहां है। कुछ पुस्तकों में अक्सर उस हिस्से को जो आयोडीन का घोल डालने पर पीला ही रहता है, बीजपत्र कह दिया जाता है। परन्तु यही तो वह हिस्सा है जिससे प्रांकुर और मूलांकुर निकलते हैं यानी

भ्रूणपोष कैसे बनता है?

परागण क्रिया के अंतिम चरण में दो नर कोशिकाओं में से एक, मादा जनन कोष को निषेचित करती है और भ्रूण बन जाता है। दूसरी नर जनन कोशिका भ्रूणपोष बनाने के लिए अंडाशय की एक अन्य कोशिका जिसमें दो केन्द्रक हैं से जाकर मिल जाती है और इससे भ्रूणपोष बनता है। यानी भ्रूण और भ्रूणपोष का विकास बीजांड में अलग हिस्से व अलग कोशिकाओं से होता है। इसके विपरीत बीज पत्र का विकास भ्रूण की कोशिकाओं से ही होता है। जिन बीजों के परिपक्व होने तक भ्रूण अपने विकास हेतु भ्रूणपोष से सारा पोषक पदार्थ अवशोषित कर लेता है ऐसे बीजों में भ्रूणपोष नहीं मिलता मगर बीजपत्र में सारे पोषक पदार्थ इकट्ठा हो जाते हैं। जैसे सेम, चना, मूंग इत्यादि। जिन बीजों में भ्रूण पूर्ण रूप से विकसित होने के लिए भ्रूणपोष में से सारा पोषक पदार्थ अवशोषित नहीं करता ऐसे बीजों में भ्रूणपोष पाया जाता है। जैसे मक्का, गेहूं इत्यादि।

कि अंकुर भी इसी हिस्से में है। तो क्या मक्के में उस तरह से बीजपत्र अलग निकालकर नहीं देख सकते जैसे हम द्विबीजपत्री बीजों यानी चना, सेम, अरंडी आदि में अलग कर पाते हैं? यह सवाल भी उठ सकता है कि एकबीजपत्री बीजों में क्या बीजपत्र होता भी है; और अगर नहीं होता तो फिर उन्हें एकबीजपत्री कहते ही क्यों हैं?

एक क्षण के लिए तो लगता है कि जब हर जगह एक बीजपत्री और द्विबीजपत्री के वर्गीकरण का इस्तेमाल होता है तो ज़रूर इन सवालों का सामान्य सा हल होगा। परन्तु जैसे ही थोड़ा गहराई में जाएं तो समझ में आता है कि मसला उतना आसान नहीं है।

सबसे पहले तो यही पता चलता है कि एकबीजपत्री बीजों में बीजपत्र अलग से नहीं निकलता। फिर यह कि मक्का के बीज में जो सफेद-पीला-सा हिस्सा होता है उसमें अंकुर भी है। यह तो कोई बड़ी बात नहीं हुई, हो सकता है कि एकबीजपत्री बीजों में बीजपत्र और अंकुर साथ में जुड़े रहते हों। परन्तु यहां एक और समस्या है कि किताबों में एक-बीजपत्री बीजों में, मुख्यत: मक्के के बीजपत्र के साथ जुड़े इस भाग को बीजपत्र नहीं कहते, स्कूटेलम कहते हैं। परन्तु उसका भी

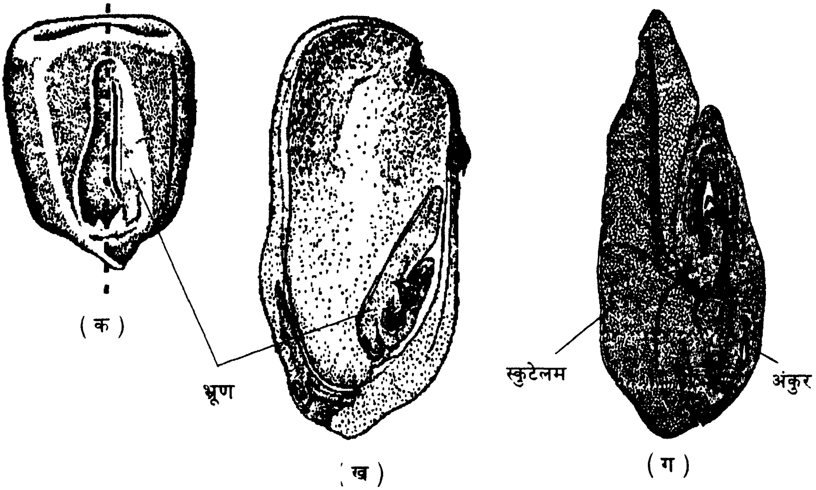

बीज से स्कुटेलम तक:
(क) मक्का का बीज जिसमें बीच में भ्रूण दिखाई दे रहा है।
(ख) पहले चित्र को टूटी रेखा से खड़ा काटने पर – मक्का के बीज की खड़ी काट। भ्रूण नीचे की ओर दाहिनी तरफ दिखाई दे रहा है।
(ग) बीच वाले चित्र के भ्रूण वाले हिस्से को बड़ा करके देखने पर; दाहिनी ओर अंकुर है और बाईं ओर स्कूटेलम जिसे कुछ लोग बीजपत्र भी कहते हैं। स्कूटेलम अंकुर को चारों ओर से घेरे रहता है और उसका काम है भ्रूणपोष से पोषक पदार्थ लेकर अंकुर तक पहुंचाना।

काम वही है – भ्रूणपोष से पोषक पदार्थ लेकर अंकुर तक पहुंचाना। इस रचना को ऊपर दिए चित्र में थोड़ा विस्तार से देखिए।

अक्सर यह माना जाता है कि बीजपत्र विशेष प्रकार की पत्तीनुमा संरचना है। परन्तु स्कूटेलम के संबंध में एक बात जो बेझिझक रूप से कही जा सकती है कि इसकी पत्तीनुमा संरचना बिल्कुल अस्पष्ट है। फिर भी स्कूटेलम को बीजपत्र का स्वरूप शायद इसलिए माना गया है क्योंकि इसका कार्य भ्रूणपोष में से भोजन अवशोषित करना है। ऐसा ही कार्य कई द्विबीजपत्री बीजों, जैसे अरंडी, चीकू इत्यादि, में बीजपत्र करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि भुट्टा भूनते हुए जो भाग चिटककर बाहर को आ जाता है उसे सिर्फ बीजपत्र नहीं कह सकते। इसमें तो स्कूटेलम समेत प्रांकुर, मूलांकुर आदि सब हैं।

स्निग्धा मित्रा: एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान कार्यक्रम से संबद्ध।

क्या बहे बिजली के तार में?

अजय शर्मा

कुछ सामान्य विद्युतीय अवधारणाओं की
जांच-पड़ताल

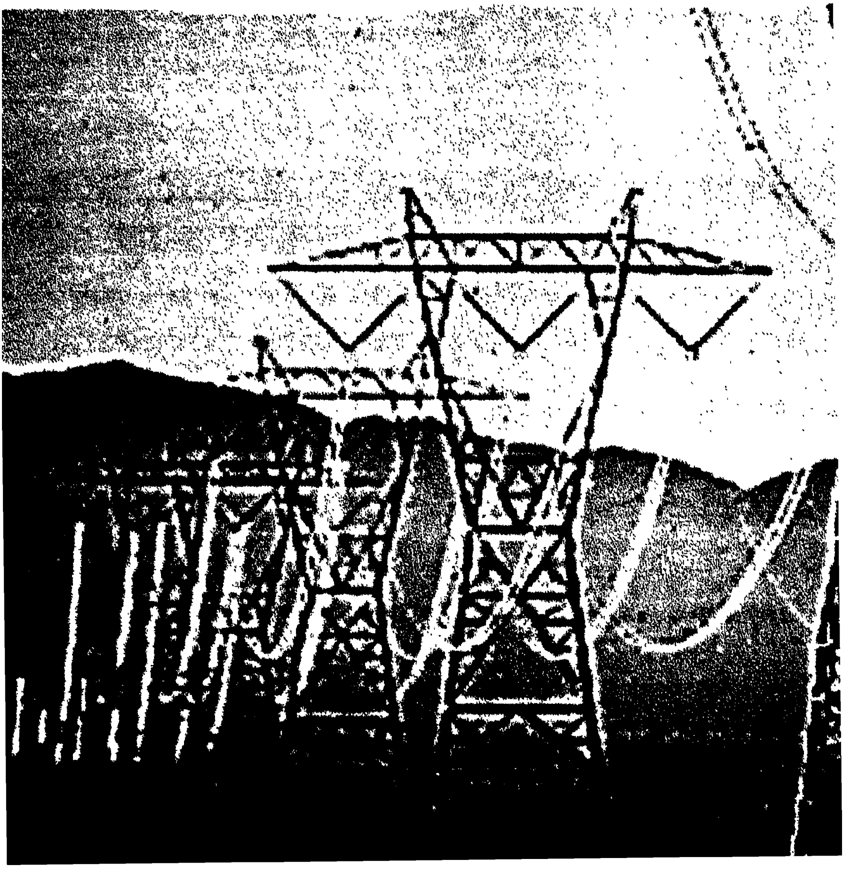

स्कूली विज्ञान पाठ्यक्रम में कुछेक चुनिंदा विषय ऐसे भी हैं जिन्हें लगभग हर साल पढ़ाया जाता है – छठवीं से लेकर दसवीं क्लास तक। विद्युत विषय उनमें से प्रमुख है। और अगर विद्यार्थी दसवीं के बाद भौतिकी पढ़ने का मन बना ले तो फिर तो उसका इस विषय से चोली-दामन का साथ तय ही समझिए।

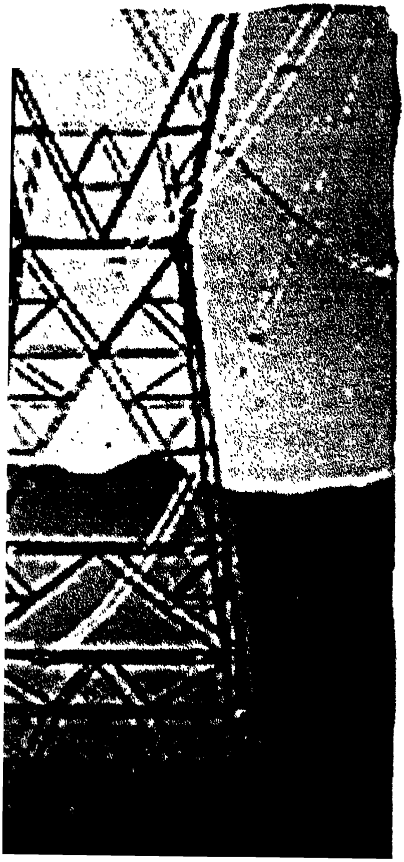

रोज़मर्रा के जीवन में बिजली और बिजली से मुहैया तमाम सुविधाओं की महत्ता के मद्देनज़र शायद यह उचित भी है।

पर क्या हमारे शिक्षकों की इस विषय पर पकड़ मज़बूत है? उनकी इस विषय की मूलभूत अवधारणाओं, जैसे करंट, वोल्टेज आदि के बारे में क्या समझ है? क्या वे बच्चों को यह विषय पढ़ाने में सक्षम हैं? ये कुछ सवाल ऐसे हैं जिनका जवाब खोजना न सिर्फ अपने-आप में एक रुचिकर कार्य है बल्कि निहायत ही ज़रूरी भी।

एक टेस्ट बिजली के बारे में

होशंगाबाद और हरदा ज़िले की शासकीय और अशासकीय शालाओं में माध्यमिक स्तर की कक्षाओं को विज्ञान विषय पढ़ा रहे शिक्षक हर महीने अपनी अकादमिक और प्रशासनिक समस्याओं का परस्पर हल खोजने के लिए ब्लॉक स्तर पर इकट्ठे होते हैं। इन मासिक गोष्ठियों में एकलव्य संस्था के कार्यकर्ताओं का भी सहयोग रहता है। इस वर्ष जनवरी माह की मासिक गोष्ठियों में विद्युत विषय की अवधारणाओं पर चर्चा और कुछ प्रयोग एक अकादमिक मुद्दे के रूप में रखे गए थे। बैठक में चर्चा सुव्यवस्थित और अर्थपूर्ण हो और शिक्षकों की इस विषय की समझ का एक पूर्वआकलन हो सके इस उद्देश्य से चर्चा से पहले शिक्षकों

से इस विषय पर दस लघु-प्रश्नों के जवाब एक कागज़ पर भरवाए गए। ये प्रश्न ऐसे थे जिनसे पता चल सके कि करंट, वोल्टेज, सेल, परिपथ/सर्किट आदि के बारे में इन शिक्षकों की समझ क्या है। इन सवालों में जिन विद्युत परिपथों को लेकर सवाल पूछे गए थे वे परिपथ वही थे जिन्हें वे खुद कक्षाओं में बच्चों से बनवाते हैं और उन पर चर्चाएं करवाते हैं।

165 शिक्षकों ने इन सवालों के लिखित जवाब दिए। ये शिक्षक काफी विविध पृष्ठभूमि के हैं। इस समूह में शहरी और ग्रामीण, विज्ञान पढ़े हुए और विज्ञान न पढ़े हुए, शासकीय और अशासकीय शालाओं में कार्यरत, नियमित और शिक्षाकर्मी, यानी सभी किस्म के शिक्षक शामिल हैं। समूह के अधिकांश शिक्षक स्नातक या उससे अधिक शैक्षिक योग्यता के माने जा सकते हैं। मध्यप्रदेश में माध्यमिक स्तर पर मात्र 12वीं पास शिक्षकों का प्रतिशत अब काफी कम हो गया है।

बस एक मायने में यह समूह माध्यमिक स्तर पर पढ़ा रहे शिक्षकों के एक प्रतिनिधि समूह से भिन्न माना जा सकता है। वह यह कि इन ज़िलों में माध्यमिक कक्षाओं को विज्ञान पढ़ा रहे शिक्षकों को हर कक्षा के लिए (यानी छठवीं, सातवीं और आठवीं के लिए) 21 दिन का विज्ञान प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके अतिरिक्त उनके अकादमिक सुदृढ़ीकरण के लिए शासन और एकलव्य संस्था द्वारा और भी कई प्रयास किए जाते हैं।

चूंकि शिक्षकों से इन सवालों को हल करवाने का मुख्य उद्देश्य मासिक गोष्ठियों में विद्युत विषय पर चर्चा करवाना था न कि इस विषय पर एक पूर्वनियोजित सर्वे करना; इसलिए सर्वे के तकनीकी नज़रिए से शिक्षकों के जवाबों से उभरी जानकारी के विश्लेषण में कई खामियां संभव हैं। लेकिन फिर भी जवाबों के विश्लेषण से शिक्षकों की इस विषय पर समझ की एक धुंधली तस्वीर तो उभरती ही है। यह तस्वीर कुछ इस प्रकार है।

खर्च क्या – करंट या ऊर्जा?

आखिर सेल में ऐसा क्या होता है जो इस्तेमाल करने पर खर्च हो जाता है? यह एक ऐसा सवाल है जिसके बारे में हरेक की कोई न कोई समझ ज़रूर होती है, चाहे वो विज्ञान पढ़ा हुआ हो या नहीं। इस बारे में शिक्षकों की समझ परखने के लिए शिक्षकों को एक कथन दिया गया था। शिक्षकों को कारण सहित बताना था कि कथन सही है या नहीं। यह कथन था:

'हरेक नई बैटरी में एक निश्चित मात्रा में करंट संग्रहित होता है जो बैटरी के इस्तेमाल करने पर धीरे-धीरे खर्च होता रहता है।'

करीब 90 प्रतिशत शिक्षकों ने इस कथन को सही माना, मात्र दो प्रतिशत ने गलत और आठ फीसदी शिक्षकों ने यह सवाल खाली छोड़ दिया। ज़ाहिर है कि विज्ञान पढ़ने-पढ़ाने के बावजूद शिक्षकगण इस आम धारणा को ही सही मानते आ रहे हैं कि सैल का इस्तेमाल करने से उसमें संग्रहित करंट खर्च होता है। जबकि सच तो यह है कि हरेक सैल या बैटरी में रासायनिक ऊर्जा संग्रहित रहती है और यह ऊर्जा ही बैटरी के इस्तेमाल करने पर अन्य रूपों में परिवर्तित (या आम भाषा में खर्च) होती रहती है। साथ ही उनके द्वारा दिए गए कारणों में साफ है कि अधिकतर शिक्षक करंट, वोल्टेज और ऊर्जा जैसे लफ़्ज़ों में स्पष्ट अंतर नहीं कर पाते हैं। इनकी परिभाषाएं उनके मन में गड़बड़ ही हैं। इस बात की पुष्टि एक और सवाल से होती है। शिक्षकों को एक सवाल में चार विकल्पों में से एक विकल्प चुनना था। यह सवाल था:

किसी चालू परिपथ में बल्ब के जलने पर:

1. *करंट खर्च होता है;*
2. *वोल्टेज खर्च होता है;*
3. *ऊर्जा खर्च होती है;*
4. *करंट, वोल्टेज और ऊर्जा तीनों ही खर्च होते हैं;*

ऊपर दिए गए सवाल के जवाब में हालांकि 52 फीसदी शिक्षकों ने सही (यानी तीसरा) विकल्प चुना है, पर गौरतलब यह भी है कि 27 फीसदी शिक्षकों की राय में बल्ब के जलने पर करंट, वोल्टेज और ऊर्जा तीनों ही खर्च होते हैं, और 12 फीसदी शिक्षक मानते हैं कि बल्ब के जलने पर वोल्टेज खर्च होता है। पहले विकल्प को चुनने वाले शिक्षक बस चार प्रतिशत ही हैं। यानी करीब आधे शिक्षक या तो स्पष्ट नहीं हैं कि बल्ब जलने पर क्या खर्च होता है या फिर गलत को सही मान बैठे हैं। दरअसल बोलचाल की भाषा में बिजली, करंट, वोल्टेज, ऊर्जा आदि शब्दों को पर्यायवाची शब्दों के रूप में उपयोग कर लिया जाता है और किन्हीं कारणों से वर्षों के शिक्षण बाद भी शिक्षक उनको इसी तरह इस्तेमाल करते रहते हैं।

करंट कैसे बहे?

माध्यमिक स्तर पर कक्षाओं में शिक्षक बच्चों से बल्बों और सैलों को जोड़कर तरह-तरह के परिपथ बनवाते हैं। ज़ाहिर है कि ऐसे परिपथों में करंट कैसे बहता है इसके बारे में शिक्षकों की कुछ धारणाएं होंगी। इन्हीं धारणाओं को उभारने के उद्देश्य से हमने शिक्षकों से कुछ सवा ल पूछे।

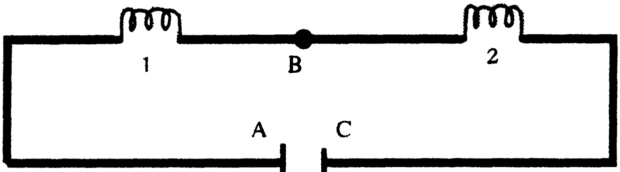

परिपथ 1

पहला सवाल था:

परिपथ 1 में दिए गए दोनों बल्ब एक जैसे हैं। अब बताएं कि–

– कौन-सा बल्ब ज़ोर से जलेगा? और क्यों?

इस सवाल में भी अधिकांश शिक्षकगण आम धारणा का ही अनुसरण करते नज़र आते हैं। यानी 60 प्रतिशत शिक्षकों के मत में बाएं से पहला बल्ब यानी बल्ब क्रमांक-1 दूसरे बल्ब की तुलना में ज़्यादा प्रकाश देगा। उनके विचार से ऐसा इसलिए होता है क्योंकि करंट परिपथ में धन से ऋण ध्रुव की ओर बहता है। और चूंकि बल्ब क्रमांक-1 करंट के बहने के रास्ते में पहले पड़ता है इसलिए पूरा का पूरा करंट उसे मिलता है। बल्ब क्रमांक-1 मिलने वाले करंट में से कुछ करंट खर्च कर देता है और बल्ब क्रमांक-2 को बचा-खुचा करंट ही मिल पाता है; इसलिए वह उतना प्रकाश नहीं दे पाता जितना कि बल्ब क्रमांक-1।

केवल 27 प्रतिशत शिक्षकों ने ही सही जवाब दिया कि दोनों बल्ब एक जैसा प्रकाश देंगे। और जब उनसे A, B और C बिंदुओं पर करंट के मान की तुलना करने के लिए कहा गया तो सिर्फ 44 प्रतिशत शिक्षकों ने कहा कि तीनों बिंदुओं पर करंट का मान बराबर होगा। ज़ाहिर है अधिकांश शिक्षक मानते हैं कि बल्ब (तथा अन्य उपकरण) एक निश्चित मात्रा में करंट को खर्च कर देते हैं जबकि खर्च तो असल में ऊर्जा ही होती है। करंट का मान ही पूरे परिपथ में बरकरार रहता है।

स्कूली पाठ्यक्रम में न तो इस बात पर पर्याप्त तवज्जो दी जाती है; और न ही ऊर्जा और करंट में फर्क को स्पष्टता से उभारा जाता है। जिसकी वजह से करंट विद्यार्थी के मन में ऊर्जा के कई गुण अख्तियार कर लेता है। करंट के बारे में इन धारणाओं से जुड़ी एक आम और गलत धारणा यह भी है कि किसी सरल परिपथ में एक और उपकरण शामिल करने का अन्य उपकरणों पर असर इस बात से तय होता है कि नए उपकरण को कहां फिट किया गया है – अन्य उपकरणों के पहले या बाद में। इस संबंध में शिक्षकों की समझ जानने के लिए उनसे नीचे दिए दो प्रश्न पूछे गए:

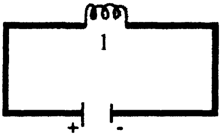

क.

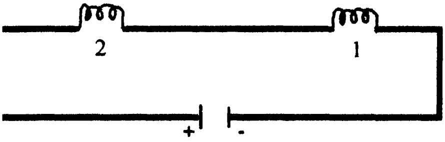

ख.

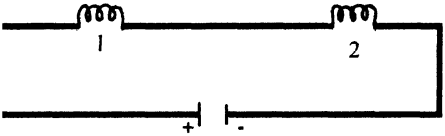

ग.

1. परिपथ-क में लगे हुए बल्ब से पहले एक और बल्ब (जैसे परिपथ-ख में) जोड़ दिया जाता है। क्या अब बल्ब क्रमांक-1 पहले की तुलना में-

- *कम रोशनी देगा।*
- *उतनी ही रोशनी देगा जितनी कि परिपथ-क में देता था।*
- *ज़्यादा रोशनी देगा।*

2. दूसरा बल्ब अगर बल्ब क्रमांक-1 के बाद में लगाया जाता है (जैसे परिपथ-ग में) तो क्या बल्ब क्रमांक-1 पहले की तुलना में-

- *कम रोशनी देगा।*
- *उतनी ही रोशनी देगा जितनी कि परिपथ-क में देता था।*
- *ज़्यादा रोशनी देगा।*

पहले सवाल के जवाब में 73 प्रतिशत ने माना कि बल्ब क्रमांक-1 पहले की तुलना *में कम रोशनी देगा*। यह सही भी है। लेकिन दूसरे सवाल के जवाब में केवल 38 प्रतिशत शिक्षकों ने ही कहा कि परिपथ में दूसरे बल्ब को बल्ब क्रमांक-1 के बाद में लगाने पर बल्ब क्रमांक-1 पहले की तुलना में कम रोशनी देगा। यानी दूसरे सवाल में सही जवाब देने वालों का प्रतिशत घट कर मात्र 38 रह जाता है।

इसका कारण यह है कि शिक्षकों के एक बड़े भाग (34 प्रतिशत) की राय में बल्ब क्रमांक-1 को पहले जितनी ही रोशनी देते रहना चाहिए। स्पष्ट है कि हमारे शिक्षकों के एक बड़े तबके में यह भ्रम व्याप्त है कि किसी विद्युत परिपथ में जुड़ा कोई भी अवयव जैसे बल्ब, विद्युत धारा पर तभी असर डालता है जब वह उस तक पहुंचती है, उससे पहले नहीं। जितना करंट उन तक पहुंचता है उसमें से कुछ वे इस्मेमाल कर लेते हैं और बाकी बचा करंट आगे बढ़ जाता है। इसीलिए परिपथ में नया बल्ब अगर पहले से जुड़े बल्ब के आगे लगा दिया जाता है तो पहले से जुड़े बल्ब को अब उतना करंट नहीं मिलेगा जितना

कि पहले मिलता था लिहाज़ा वह कम रोशनी देने लगेगा। पर अगर नए बल्ब को पुराने बल्ब के बाद में जोड़ा गया है तो शिक्षकगण यह मान बैठते हैं कि पुराने बल्ब के करंट की सप्लाई में तो कोई फर्क नहीं आएगा। उसे उतना ही करंट मिलेगा जितना कि पहले मिलता था। ज़ाहिर है यह भ्रम उसी आम धारणा का हिस्सा है जिसके तहत परिपथ में विद्युतधारा संग्रहित नहीं रहती और अवयवों द्वारा खर्च कर दी जाती है।

मामला सिर्फ देश का नहीं

यूरोपीय देशों में छात्रों पर अध्ययन से पता चला है कि स्कूल और यहां तक की कॉलेज में पढ़ रहे भौतिकी के छात्रों में भी यह गलत धारणा काफी व्याप्त है। एक अध्ययन में जब स्कूलों में भौतिकी पढ़ाने हेतु ट्रेनिंग ले रहे भौतिकी और इंजीनियरिंग में स्नातक 18 प्रशिक्षणार्थियों के एक समूह का इस विषय पर परीक्षण लिया तो 7 प्रशिक्षणार्थी इस गलतफहमी का शिकार पाए गए। यानी हम ही नहीं अन्य देश भी इस समस्या से जूझ रहे हैं कि कैसे विद्यार्थियों को करंट प्रवाह की सही समझ दे सकें। पर अब देखना यह है कि हमारे देश के शिक्षाविद इस समस्या से निपटने के लिए दूसरे मुल्कों जितने प्रयास करते हैं या नहीं।

सीमाएं किसी तुलना की

बोलचाल की भाषा में हम कई बार यह कहते हैं कि बिजली या करंट तारों में बहता है। इस विषय को पढ़ाते वक्त भी अक्सर तारों में विद्युत धारा प्रवाह की तुलना, पाइप में पानी के प्रवाह से की जाती है। इसलिए कॉलेज तक भौतिकी पढ़े कई लोग भी यह मानते पाए गए हैं कि जिस तरह मोटर चालू करते ही खाली पड़े पाइपों में पानी बहने लगता है, उसी तरह किसी बंद परिपथ में बैटरी (या जनरेटर) लगाते ही करंट, बैटरी के एक ध्रुव से निकल कर तारों में से होते हुए बैटरी के दूसरे ध्रुव की ओर बहने लगता है। मिसाल के तौर पर परिपथ-1 के चालू करते ही करंट पहले A बिंदु, फिर B

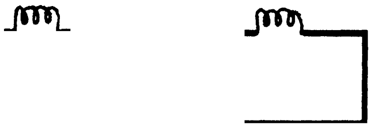

परिपथ 1

और आखिर में C बिंदु पर पहुंचेगा। यह एक गलत धारणा है। दरअसल जिन कणों के बहने को हम विद्युत धारा प्रवाह कहते हैं वे कण (इलेक्ट्रॉन) तारों में पहले से ही मौजूद होते हैं। जब एक परिपथ चालू होता है तो सबसे पहले तो लगभग प्रकाश की

गति से पूरे परिपथ में विद्युत-चुंबकीय क्षेत्र की स्थापना होती है और यह विद्युत-चुंबकीय क्षेत्र परिपथ के तारों और अवयवों में मौजूद इलेक्ट्रानों पर एक साथ बल लगाता है, जिसकी वजह से परिपथ के सभी बिंदुओं पर एक साथ ही करंट बहने लगता है। बैटरी या जनरेटर का कार्य तो केवल इस विद्युत-चुंबकीय क्षेत्र को परिपथ में स्थापित करने का होता है।

शिक्षकों से जब इस बारे में एक सवाल पूछा गया तो जवाब आशा के अनुसार ही निकले। हमने एक कथन दिया था जिसके बारे में कारण सहित बताना था कि वह कथन सही है या नहीं। कथन था-

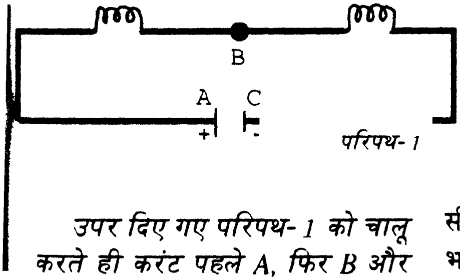

परिपथ- 1

उपर दिए गए परिपथ- 1 को चालू करते ही करंट पहले A, फिर B और अंत में C बिंदु पर पहुंचता है।

जवाब देने वाले 165 शिक्षकों में से 134 शिक्षकों ने यानी 81 प्रतिशत ने यह कथन सही माना। केवल 11 शिक्षक ऐसे थे जो मानते थे कि तीनों बिंदुओं पर करंट एक साथ बहेगा। मेरे विचार से हमारे अधिकांश शिक्षक इस बारे में एक गलत धारणा को सच इसलिए मानते हैं क्योंकि विद्युतधारा प्रवाह की पानी के प्रवाह से तुलना करना विद्युत धारा जैसी अमूर्त अवधारणा को समझने के लिए काफी उपयोगी साबित होता है। पानी के प्रवाह से सभी परिचित होते हैं इसलिए बात तुरंत समझ में आ जाती है। साथ ही कभी भी अनुभवों के ज़रिए या किताबों के द्वारा इस धारणा को चुनौती नहीं मिलती है इसलिए भौतिकी में डिग्री प्राप्त शिक्षक भी यही मान कर विद्युत विषय पढ़ाते रहते हैं। दिक्कत यहीं है कि विद्युत धारा एक ऐसी अमूर्त अवधारणा है जिसे समझने समझाने के लिए आम जीवन की कुछ उपमाओं का सहारा लेना ही पड़ता है; और यही उपमाएं फिर बाद में कई गलत धारणाओं को जन्म देती रहती हैं। बेहतर तो यही होगा कि हम इन उपमाओं का इस्तेमाल भी करें और इन उपमाओं की सीमाओं से भी विद्यार्थियों को भली-भांति अवगत कराते जाएं। वर्तमान में हमारी शिक्षण पद्धति में ऐसे प्रयासों की काफी कमी नज़र आती है।

परिपथ दो किस्म के : श्रेणी-क्रम और समानांतर-क्रम

होशंगाबाद और हरदा ज़िलों की शालाओं में कक्षा 6 और 7 के विद्यार्थी विद्युत विषय को पढ़ते समय

खुद अपने हाथों से बल्बों और सैलों को जोड़ कर श्रेणी-क्रम और समानांतर-क्रम परिपथ बनाते हैं। परिपथ बनाने के बाद बच्चों से यह अपेक्षा होती है कि वे इन दोनों परिपथों की आपस में तुलना करें और बताएं कि किस परिपथ में बल्ब ज़्यादा प्रकाश देते हैं। हम उम्मीद कर रहे थे कि अगर यही सवाल शिक्षकों से पूछा जाए तो निश्चित ही अधिकांश शिक्षक इसका सही उत्तर दे पाएंगे। परीक्षण में हमारी उम्मीद खरी उतरी। पर सही उत्तर देने वाले शिक्षकों का प्रतिशत उतना अधिक नहीं निकला जितना कि ऐसे सरल सवाल के लिए होना चाहिए था।

कुल 64 फीसदी शिक्षक ही सही उत्तर दे पाए जबकि 29 फीसदी इस गलत धारणा को सही मानते पाए गए कि श्रेणीक्रम में बल्ब समानांतर क्रम की तुलना में अधिक प्रकाश देंगे। 7 प्रतिशत ने इस सवाल का उत्तर नहीं दिया। यानी इन ज़िलों में विज्ञान पढ़ा रहे करीब 36 प्रतिशत शिक्षक ऐसे हैं जो इस बारे में भ्रमित या अस्पष्ट हैं। यह एक काफी बड़ा प्रतिशत है जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता है। इस परिणाम से कदाचित यह निष्कर्ष निकालना भी गलत न होगा कि इन दोनों ज़िलों की करीब 36 प्रतिशत शालाओं में बच्चों से श्रेणीक्रम और समानांतर क्रम परिपथ बनवाए नहीं जा रहे हैं। यह यकीनन एक चिंता का विषय है।

वोल्टेज

हालांकि 'वोल्टेज' लफ्ज़ का प्रचलन काफी आम है, पर शिक्षकों के मन में इसके अर्थ को लेकर अक्सर काफी भ्रम की स्थिति पाई जाती है। एक सामान्य गलतफहमी यह है कि इसे विद्युत धारा प्रवाह का परिणाम मान लिया जाता है, न कि विद्युतधारा प्रवाह का मूल कारण। यानी अक्सर यह मान लिया जाता है कि जब किसी परिपथ में करंट बहता है तभी उसके किन्हीं बिंदुओं के बीच वोल्टेज मौजूद रहता है अन्यथा नहीं। होशंगाबाद और हरदा ज़िले के शिक्षकगण भी इस भ्रम से ग्रसित हैं या नहीं इसको परखने के लिए हमने एक छोटा-सा सवाल उनके समक्ष रखा था। सवाल कुछ इस तरह था-

नीचे एक सरल परिपथ दिया गया है—

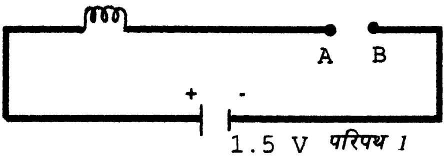

परिपथ 1

A और B बिंदुओं के बीच वोल्टेज-

1. शून्य होगा।

2. शून्य से अधिक होगा पर 1.5 वोल्ट से कम।

3. 1.5 वोल्ट होगा।

4. कुछ कहा नहीं जा सकता।

परीक्षण से स्पष्ट है कि दुनिया भर के स्कूली विद्यार्थियों की भांति हमारे अधिकांश शिक्षक (करीब 73 प्रतिशत) भी यही मानते हैं कि चूंकि उपरोक्त परिपथ टूटा हुआ है और उसमें करंट नहीं बह रहा है इसलिए A और B बिंदुओं के बीच वोल्टेज शून्य ही होगा। केवल 16 प्रतिशत शिक्षकों ने सही अर्थात तीसरा विकल्प चुना।

इसलिए इन लघु-प्रश्नों को करवाने के बाद जब हमने शिक्षकों से ऐसा ही एक परिपथ बनवा कर इन दो बिंदुओं के बीच नपवाया तो वोल्टेज का 1.5 वोल्ट निकलना यकीनन ही अधिकांश के लिए एक अचरज का विषय था। ज़ाहिर है कि बहुत ही कम स्कूली शिक्षक इस बात को समझते हैं कि किसी भी परिपथ में वोल्टेज करंट को जन्म देता है, न कि करंट वोल्टेज को। इस विषय पर किए गए अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकला है कि विद्यार्थियों में (और संभवतः हमारे शिक्षकों में भी) इस व्याप्त भ्रम का मूल कारण पाठ्यक्रमों में मौजूद असंतुलन है। अधिकांश पाठ्यक्रमों में शुरू से काफी ऊंची कक्षाओं त क विद्युत विषय पढ़ाते समय विद्युत धारा को ही सबसे मूलभूत और महत्वपूर्ण अवधारणा की तरह प्रस्तुत किया जाता है। साथ ही आम बोलचाल की भाषा में भी बिजली का परिचायक करंट का बहना माना जाता है, न कि वोल्टेज की मौजूदगी। संभवतः इन्हीं कारणों के चलते वोल्टेज के बारे में विद्यार्थियों और शिक्षकों के मन में इस किस्म की गलत धारणाएं घर कर लेती हैं।

सेलः किसमें कितना दम

विज्ञान अक्सर सहज बोध के खिलाफ जाता प्रतीत होता है। रोज़ाना ढेर विद्युतीय उपकरणों का इस्तेमाल करके हममें से अधिकतर यह निष्कर्ष निकाल बैठते हैं कि विद्युतीयं उपकरण हमेशा एक निश्चित मात्रा में ही विद्युतीय ऊर्जा खर्च करते हैं। यानी अगर किसी परिपथ में अगर एक 100 वॉट का बल्ब लगा हुआ है तो वह हर हाल में प्रति सेकंड 100 जूल ऊर्जा ही खर्च करेगा चाहे परिपथ के अन्य अवयव परिपथ से कैसे भी जुड़े हों। इस बात पर बहुत कम लोगों का ध्यान जाता है कि 100 वॉट का बल्ब प्रति सेकंड 100 जूल ऊर्जा तभी खर्च करेगा जब उसे 220 वोल्ट का वोल्टेज प्राप्त होगा, अन्यथा नहीं। विज्ञान शिक्षक इस आम समझ से कितना सहमत हैं इसको परखने के लिए हमने दो सवाल उनके सामने रखे।

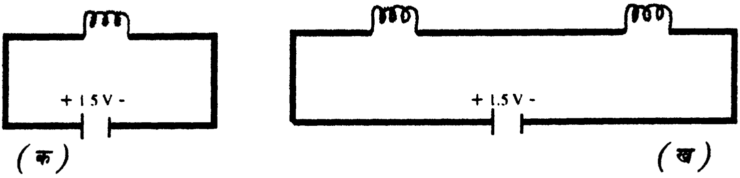

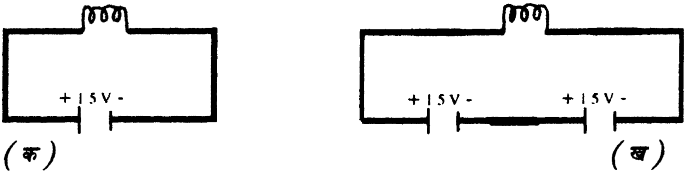

1. *किस परिपथ का सेल जल्दी खर्च होगा?*
2. *किस परिपथ में बल्ब ज़्यादा लंबे समय तक जलेगा?*

शिक्षकों के उत्तरों से ज़ाहिर है कि वे भी इस मामले में आम समझ को ही सही मानते हैं। पहले सवाल के उत्तर में लगभग 89 प्रतिशत शिक्षकों ने माना कि दो बल्ब वाले परिपथ का सेल जल्दी खर्च होगा। केवल 7 प्रतिशत शिक्षकों ने सही उत्तर दिया कि एक बल्ब वाले परिपथ का सेल जल्दी खर्च होगा। आम समझ पर शिक्षकों का विश्वास इतना गहरा है कि मासिक गोष्ठियों में अधिकांश शिक्षक सही उत्तर को मानने के लिए तैयार ही नहीं थे। उन्होंने बात तभी मानी जब वहीं पर उनसे ऐसे दो परिपथ बनवा कर यह प्रयोग करवाया गया।

ज़ाहिर है कि शिक्षकों के मन में यही धारणा है कि हरेक बल्ब एक निश्चित दर से ऊर्जा खर्च करता है। इसलिए उनके लिए यह निष्कर्ष निकालना सहज ही था कि अगर एक बल्ब कुछ निश्चित दर से ऊर्जा खर्च करता है तो श्रेणीक्रम में जुड़े दो बल्ब कुल मिलाकर दुगनी नहीं तो अधिक दर से ही ऊर्जा खर्च करेंगे। जिसके फलस्वरूप दो बल्बों वाले परिपथ का सेल एक बल्ब वाले परिपथ के सेल की तुलना में जल्दी खर्च हो जाएगा। दरअसल ऐसा नतीजा निकालते वक्त अधिकांश लोग इस सामान्य अवलोकन को नज़रअंदाज़ कर देते हैं कि एक श्रेणी क्रम परिपथ में जितने अधिक बल्ब जुड़े हुए होते हैं, हरेक बल्ब उतना ही कम प्रकाश देता है। कम प्रकाश देता है यानी कम ऊर्जा खर्च करता है। ऐसा नहीं है कि शिक्षकगण इस अवलोकन से परिचित नहीं हैं। बस वो इस जानकारी को निष्कर्ष निकालते वक्त इस्तेमाल नहीं करते.

हैं। इस विषय पर शोध भी इसी बात को उभारता है कि अधिकांश विद्यार्थी एक समग्र समझ के अभाव में अलग-अलग परिस्थितियों में अलग-अलग किस्म के तर्कों और जानकारियों का इस्तेमाल अपनी समझ बनाने के लिए करते हैं। और विभिन्न परिस्थितियों की समझ में परस्पर विरोधाभास संभव है।

इसी तरह दूसरे सवाल में भी अधिकांश (यानी 65 प्रतिशत) शिक्षकों ने यही माना कि दो सेल वाले परिपथ का बल्ब ज़्यादा देर तक जलेगा। यह प्रश्न करने के बाद जब शिक्षकों ने खुद प्रयोग करके देखा तो उन्हें काफी आश्चर्य हुआ कि दो सेल वाले परिपथ का बल्ब ही जल्दी बुझ जाता है। यहां भी संभवत: शिक्षकों ने इसी समझ के आधार पर गलत उत्तर चुना होगा कि एक बल्ब एक निश्चित दर से ही ऊर्जा खर्च करता है; इसलिए दो सेल, एक सेल की तुलना में अधिक समय तक उस दर से एक बल्ब को ऊर्जा सप्लाई कर सकेंगे। जबकि होता यह है कि दो सेलों को श्रेणीक्रम में जोड़ने के कारण बल्ब को मिलने वाला वोल्टेज दुगना हो जाता है। जिसकी वजह से परिपथ में करंट (आदर्श परिस्थिति में) दुगना और बल्ब की ऊर्जा इस्तेमाल करने की दर चौगुनी (आदर्श परिस्थिति में) हो जाती है। नतीजतन दो सेल वाले परिपथ के सेल देरी के बजाए जल्दी ही खर्च हो जाते हैं।

दरअसल ये दोनों सवाल थोड़े कठिन हैं और शिक्षकों से सही उत्तर की उम्मीद करना थोड़ी ज़्यादती होगी। इनको प्रश्नावली में बस इसी उद्देश्य से शामिल किया गया था ताकि उनकी समझ में मौजूद विरोधाभास उभरकर सामने आ सकें, और उनका चर्चा और प्रयोगों द्वारा निराकरण हो सके।

निष्कर्ष

कुल मिलाकर देखा जाए तो शिक्षकों से मिले उत्तर, शिक्षकों में विद्युत विषय को लेकर मुख्यत: चार किस्म की गलत धारणाओं की मौजूदगी की ओर इशारा करते हैं:

1. विद्युत धारा, वोल्टेज और विद्युत ऊर्जा में वे फर्क नहीं कर पाते।
2. परिपथ में बह रही विद्युतधारा खर्च हो जाती है।
3. परिपथ में बदलाव का असर पूरे परिपथ पर न पड़कर केवल 'स्थानीय' या फिर बदलाव के स्थान के 'बाद' के हिस्से पर ही पड़ता है।
4. डिमांड ही सप्लाई का निर्धारण करती है। यानी एक बल्ब (या और कोई उपकरण) एक निश्चित दर से ही ऊर्जा खर्च करता है, ऊर्जा स्रोत का वोल्टेज भले ही कितना भी हो, और चाहे बल्ब परिपथ में कैसे भी फिट हों।

इस विषय पर किए गए सभी शोध बताते हैं कि दुनिया भर के स्कूली विद्यार्थियों को यह विषय समझने में इन्हीं समस्याओं का सामना करना पड़ता है। शिक्षकों की समझ को लेकर इस किस्म के ज़्यादा शोध नहीं हुए हैं। पर होशंगाबाद और हरदा ज़िले के शिक्षकों के उत्तरों के आधार पर शायद यह निष्कर्ष निकालना गलत न होगा कि अधिकांश स्कूली शिक्षक भी इन्हीं गलतफहमियों के शिकार होंगे।

कई अध्ययनों से यह साबित हो चुका है कि आम अनुभवों से उपजे सहज ज्ञान की हमारी समझ पर पकड़ काफी मज़बूत होती है। स्कूलों में प्राप्त वैज्ञानिक समझ जब हमारे सहज ज्ञान से मेल नहीं खाती तो ऐसा बहुत ही कम होता है कि हम अपना सहज ज्ञान भुला बैठें।

ज़्यादातर तो यही होता है कि हम दोनों किस्म की समझ का स्थितिनुसार इस्तेमाल करते रहते हैं। 'ऑफिशयल' वैज्ञानिक समझ का कक्षा और इम्तहानों में, और आम जनता की समझ का रोज़मर्रा की परिस्थितियों में। विद्युत विषय के साथ ऐसा ही होता है। बदकिस्मती से हमारे स्कूलों के विज्ञान पाठ्यक्रम ऐसे नहीं होते कि कक्षा में ही हमारी अलग-अलग समझ के विरोधाभास उभर कर सामने आएं और उनका वहीं निराकरण हो सके। दरअसल, यह विषय स्कूली स्तर पर पढ़ना-पढ़ाना उतना सरल नहीं है जितना कि प्रतीत होता है। इसकी सभी प्रमुख अवधारणाएं (करंट, वोल्टेज, प्रतिरोध आदि) अमूर्त किस्म की हैं जिनका सीधा अवलोकन संभव नहीं होता। बस इनके प्रभाव ही हम देख पाते हैं। साथ ही इस विषय को समझाने के लिए अक्सर जिन परिपथों का कक्षाओं में इस्तेमाल किया जाता है उनका रोज़मर्रा के जीवन से कोई सरोकार नहीं होता। नतीजतन स्कूली ज्ञान का सहज ज्ञान से जुड़ाव नहीं हो पाता।

स्कूलों में पढ़ा रहे अधिकांश शिक्षक इस विषय को स्कूल स्तर तक ही पढ़ते हैं। इसलिए इस स्तर तक जो समझ बन जाती है उसमें सुधार करने के मौके उन्हें कम ही मिल पाते हैं। होशंगाबाद और हरदा ज़िले के शिक्षकों को ज़रूर विशिष्ट विज्ञान प्रशिक्षण दिया जाता है। पर ज़ाहिर है अभी और सुधार की गुंजाइश बाकी है।

तो क्या हम मान लें कि होशंगाबाद और हरदा ज़िले के बच्चों को स्कूलों में इस विषय की गलत समझ दी जा रही है? शायद नहीं। यह इसलिए कि इन दो ज़िलों में होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के तहत जो विज्ञान पाठ्यक्रम माध्यमिक स्तर पर चल रहा है उसमें ज़ोर इस बात पर नहीं है कि

बच्चे आठवीं तक करंट, वोल्टेज जैसी कठिन, अमूर्त अवधारणाओं की समझ बना लें।

इस पाठ्यक्रम में बच्चों से अपेक्षा यह है कि अपने हाथों से बल्बों के परिपथ बनाना सीख लें, प्रयोग द्वारा पदार्थों का चालकता-कुचालकता के आधार पर वर्गीकरण कर सकें और कुछ विद्युतीय प्रभावों का अध्ययन कर लें। यानी पाठ्यक्रम का केंद्र बिंदु रोज़मर्रा के जीवन से जुड़ी विषय की वह मोटी समझ है जो सीधे प्रयोगों द्वारा हासिल की जा सकती है। इसलिए शिक्षक अगर करंट, वोल्टेज आदि को लेकर कई गलतफहमियों के शिकार भी हैं तो संभव है कि इसका बच्चों की समझ पर ज़्यादा गलत असर न पड़े। पाठ्यक्रमों में जहां करंट, वोल्टेज आदि पर फोकस अधिक है, वहां ज़रूर शिक्षकों की गलत समझ के बच्चों तक पहुंचने के आसार अधिक हैं। इसलिए स्कूली शिक्षा के कर्ताधर्ताओं का ध्यान इस ओर जाए यह निहायत ही ज़रूरी है।

अजय शर्मा: एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से संबद्ध।

सर्वे के आंकड़ों की कम्प्यूटर फीडिंग में **नीलेश मालवीय** और आंकड़ों के विश्लेषण में **प्रमोद मैथिल** का विशेष सहयोग रहा।

ज़रा सिर तो खुजलाइए

छह समान लम्बाई की सरल रेखाओं की मदद से आठ त्रिभुज बनाने हैं। बस एक शर्त है – बनाया गया प्रत्येक त्रिभुज अपने-आप में एक समबाहु त्रिभुज हो।

हो सकता है इस पहेली का एक जवाब आप पहले से ही जानते हों। इसलिए इस पहेली का वो जवाब यहां दे रहे हैं! किसी और तरीके से 6 समान लम्बाई की रेखाओं से 8 त्रिभुज बनाने की कोशिश कीजिए।

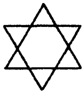

यह है पहला जवाब। इसमें 6 छोटे त्रिभुज और 2 बड़े त्रिभुज बन रहे हैं। दूसरा तरीका आपको खोजना है। अपने जवाब इस पते पर भेजिए।

संदर्भ
द्वारा, एकलव्य
कोठी बाज़ार, होशंगाबाद, म. प्र. 461001

नियमित प्रकाशन शुरू

अब संदर्भ का मराठी में भी नियमित रूप से प्रकाशन शुरू हो गया है। मराठी संदर्भ भी द्वैमासिक है और इसका वार्षिक सदस्यता शुल्क 100 रुपए है। सदस्यता शुल्क आप मनीऑर्डर से भेज सकते हैं।
सदस्यता शुल्क भेजने या और अधिक जानकारी के लिए निम्न पते पर संपर्क करें।

'मराठी संदर्भ'
द्वारा, अमृता क्लिनिक
संभाजी पुल कॉर्नर, कर्वे रोड़
पुणे, महाराष्ट्र, पिन – 411004

एक अनुभव

मेरा एक प्रयोग

रोमा देव हालदार

पश्चिम बंगाल की एक देहाती प्राथमिक शाला; जहां पढ़ाने में न तो शिक्षकों की रुचि थी और न बच्चों में पढ़ने का उत्साह था। वहां एक शिक्षिका ने प्राथमिक शिक्षा को प्रभावी और बच्चों की ज़रूरत के मुताबिक ढालने का काम शुरू किया। विविध गतिविधियों के माध्यम से पढ़ाई को आनंददायक बनाने का यह काम तेरह साल तक चला .... तब जाकर शाला में पढ़ने-पढ़ाने की स्थितियों में सुधार हुए। कितना कठिन होता है हालातों को बदल पाना।

मुझे अपनी बात कुछ विस्तार से कहने दीजिए। इस स्कूल का नाम पार्टली बेज़िक प्रायमरी स्कूल है। इस स्कूल के आसपास के गांवों में मुस्लिम या अनुसूचित जाति के हिन्दू लोग रहते हैं। यहां साक्षरता केवल बीस प्रतिशत है और अस्सी प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे जीवनयापन करते हैं। इस गांव से कलकत्ता 150 कि.मी. दूर है, और बोलपुर नामक एक छोटा कस्बा, यहां से दस कि.मी. दूर है।

1985 में, जब मैंने इस स्कूल में कार्य प्रारम्भ किया था तो मैंने पाया कि स्कूल की वेतन सूची में पांच शिक्षकों के नाम दर्ज थे लेकिन किसी भी कार्यदिवस पर केवल दो या तीन शिक्षक ही स्कूल आते थे।

स्कूल के रजिस्टर में भी 160 विद्यार्थियों के नाम लिखे हुए थे, लेकिन मुश्किल से 40-50 विद्यार्थी ही रोज़ स्कूल आते थे।

एक बार किसी अनुपस्थित विद्यार्थी से उसके साथियों ने, इस बारे में पूछा तो उसने टिप्पणी की, "मैं स्कूल क्यों जाऊं और पढ़ने-लिखने की मुसीबत उठाऊं; और वो मोटी तनख्वाह का मज़ा ले?" कई बार विद्यार्थियों को दिन में मिलने वाले टिफिन के वितरण को देखकर मुझे बहुत निराशा हुई। विद्यार्थियों के टिफिन के लिए जो डबलरोटियां आती थीं, उनमें से एक बड़ा हिस्सा शिक्षक अपने घर ले जाते थे।

शिक्षकों का स्कूल आने का कोई निश्चित समय नहीं था। यह 11:30 से 12:30 के बीच कभी भी हो सकता था। अक्सर विद्यार्थी लगभग 10 बजे या उससे भी जल्दी आ जाते थे, और खेलना, पेड़ों पर चढ़ना, गप्पें लगाना या एक-दूसरे से लड़ना शुरू कर देते थे। शिक्षकगण किसी भी विषय, जो क्रिकेट से लेकर मगरमच्छ प्रजनन तक कुछ भी हो सकता था, पर जी भर के चर्चा कर लेने के बाद 12-12:30 बजे कक्षा लेते थे। पढ़ाई के दौरान भी महिला शिक्षकों को स्वेटर बुनने में कोई हिचक नहीं थी और एक-दो लड़कियों को वे अपने सिर में से सफेद बाल तोड़ने में लगाए रखती थीं। 2:30 बजे तक सारा काम खत्म हो जाता और छुट्टी का घंटा बज जाता था। शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही स्कूल से चले जाते थे।

यूं हुई शुरुआत

ऊपर बताए गए स्कूली वातावरण में मैंने किसी अन्य स्थान से स्थानांतरित होकर उस स्कूल में पदभार ग्रहण किया था। मैंने सोचना शुरू किया कि किस तरह काम किया जाए, जिससे सारे स्कूल का वातावरण सुव्यवस्थित हो जाए और उसका विद्यार्थियों, शिक्षकों और गांव के लोगों से भी उचित ताल-मेल हो जाए। मैंने दस विद्यार्थियों के साथ काम शुरू किया। हालांकि मेरे कक्षा

पहली के रजिस्टर में पचास विद्यार्थियों के नाम दर्ज थे, लेकिन मुश्किल से दस बच्चे ही प्रतिदिन स्कूल आते थे। मैंने अपना कार्य करने का तरीका धीरे-धीरे अपनाया, और 13 वर्षों तक जारी रखा; तब जाकर मैंने यह निश्चयपूर्वक अनुभव किया कि अन्त में मैं अपने उद्देश्य में सफल हो गई हूं।

मेरी कक्षा का कार्यक्रम इस प्रकार था:

दिन	10:30	11:00	12:00	1:30	2:30
सोमवार	सफाई/प्रार्थना	गणित	बंगाली	कविता पाठ	स्वास्थ्य
मंगलवार	"	बंगाली	गणित	प्रकृति अध्ययन	कहानी
बुधवार	"	गणित	बंगाली	सामान्य ज्ञान	चित्रकला
गुरुवार	"	बंगाली	गणित	विविध संग्रह	दस्तकारी
शुक्रवार	"	पहेलियां	वर्णमाला	खेल	कविता पाठ
शनिवार	"	टेस्ट	साहित्यसभा		

कदम-दर-कदम मेरी गतिविधियां

मां की तरह प्यार भरा व्यवहार

मैंने बच्चों के साथ एक स्नेही मां की तरह प्यार और सावधानी से व्यवहार करना शुरू किया। उन दिनों अक्सर यह देखा जा सकता था, कि कुछ छोटे बच्चे मेरी गोदी में बैठे रहते, डर के मारे उनकी आंखें चौड़ी खुली रहतीं और वे मुझे सुन रहे होते। मैं कहानी सुना रही होती या सुकुमार राय की बच्चों की किताब, अबोल-तबोल में से कविताएं। कुछ ही हफ्तों के समय में मैंने उनका विश्वास प्राप्त कर लिया। उनके डरे हुए चेहरे, अब मुस्कुराने लगे। उन्होंने मुझे एक दोस्त

और खेल के साथी की तरह समझ लिया था।

आगे मैंने पाया कि बहुत से बच्चों के हाथ-पैरों पर फोड़े-फुंसियों के कारण ज़ख्म थे। और विटामिनों की कमी से उनके मुंह के अन्दर भी ज़ख्म थे। मैंने देखा कि उन्हें इधर-उधर थूकने की गंदी आदत थी और वे अपनी गंदी नाक को अपने नंगे हाथ या अपने कपड़ों के सिरों से पोंछ लेते थे। मैंने जांच की, उनके नाखून काटे, उनके फटे हुए कपड़ों की सिलाई की। कमीज़, फ्रॉक आदि के टूटे हुए बटन टांके, घर में लेप बनाकर उनके फोड़े-फुंसियों पर लगाया और बच्चों को बिना पैसे लिए विटामिन की गोलियां बांटीं।

जल्दी ही बच्चों की माताएं भी मुझसे आकर मिलीं और चुटकियों में मैंने बच्चों को साफ-सुथरा और अच्छी स्वस्थ आदतों वाला बना दिया। वे साधारण कपड़े पहनते थे, लेकिन वे साफ, धुले हुए होते थे।

अक्सर माताएं मुझसे मिलने आतीं और बच्चों की किसी समस्या के लिए सलाह लेतीं या बच्चों को बुखार आदि कोई बीमारी होती तो मुझे अपने घर बुलातीं।

कक्षा शिक्षण

मैंने भाषा, इतिहास, गणित और भूगोल की औपचारिक पढ़ाई शुरू नहीं कराई। लेकिन कहानी सुनाना और कहानी की किताबें जैसे – अबनिन्द्र नाथ ठाकुर की या रूसी प्रकाशन की या सुकुमार रॉय, उपेन्द्र किशोर रॉय या जोगेन्द्र नाथ सरकार की कविताएं पढ़ाना शुरू कराया।

इन शुरुआती कोशिशों से बच्चे मेरी कक्षा की ओर आकर्षित हुए और इन सब में रुचि लेने लगे। यह रुचि जल्दी ही अनुपस्थित रहने वाले बच्चों में भी फैलने लगी। धीरे-धीरे वे भी वापस स्कूल आने लगे।

तीन-चार महीनों में ही मेरी कक्षा दाखिल हुए विद्यार्थियों से पूरी भर गई। स्कूल नहीं आने वाले बच्चों की संख्या मुश्किल से एक या दो प्रतिदिन रह गई।

यह निरंतरता कैसे बनी रहे . . .

अब मेरे सामने सवाल था कि इस रुचि को लम्बे समय तक कैसे कायम रखा जाए, इसके लिए मैंने नई-नई गतिविधियां करवाने की योजना बनाई। मैंने सोचा कि किसी भी काम के दो पहलू होने चाहिए। एक तो इसमें सीखने-सिखाने से सम्बन्धित कुछ होना चाहिए, जैसे विद्यार्थी के विकास के एक-दो पक्ष भी सम्मिलित हों, वह चाहे भाषा सीखने के क्षेत्र में हो या गणित, इतिहास आदि के। दूसरे, विद्यार्थियों की मूल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कुछ होना चाहिए। जैसे – कोई आर्थिक मसला, या आम जनता के जानने योग्य बात, या मां की रसोईघर की कोई आवश्यक वस्तु, या उसकी स्वयं की खेलने की कोई चीज़ वगैरह, कुछ भी बात हो सकती है।

विविध गतिविधियां:

संबंधियों को पत्र लिखना और डाक में डालना

शुरू में मैंने अभिभावकों से पोस्टकार्ड लेकर बच्चों को दिए, जिन पर ठीक पता लिखा हुआ था।

मैंने ब्लैकबोर्ड पर पत्र लिखा, उन्होंने उसकी नकल की और मैंने वे सब पोस्टकार्ड डाक में डाल दिए। एक महीने में अधिकतर बच्चों ने बताया कि वे बहुत खुश थे क्योंकि उनके नाना, चाचा आदि को खत मिल गए थे और उन्होंने किसी संदेशवाहक के ज़रिए जवाब भेजा था। बच्चों के लिए यह एक महान अनुभव था, कि वे अपने दूर रहने वाले सम्बन्धियों को सन्देश भेज सकते थे।

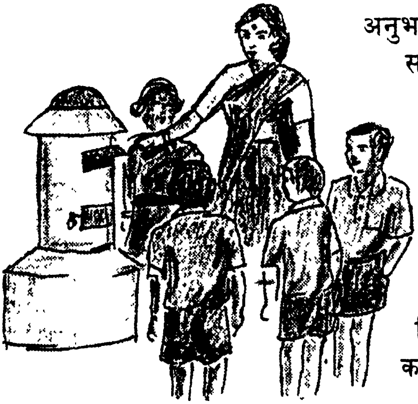

बाद में मैं उन्हें भ्रमण के लिए डाकखाने ले जाती थी, जो एक किलोमीटर दूर था। हम प्रकृति का आनन्द लेते हुए, बड़े-बड़े धान के खेतों के पास से होकर जाते। रास्ते में मुझे उनसे कुछ अनजान पौधों, टिड्डे, ड्रैगनफ्लाई आदि के बारे में बात करने का अवसर मिल जाता था।

डाकखाने पहुंचने पर मैंने बच्चों से पोस्टकार्ड खरीदने को कहा, फिर मैं उन्हें एक पेड़ के नीचे ले गई। वहां बैठकर उन्होंने पत्र लिखे और फिर डाक में डाले। मुझे याद है, मुझे उन्हें समझाना पड़ा था कि पत्र, किस प्रकार उनकी नानी, चाचा आदि तक पहुंचता है जबकि गंजा पोस्टमास्टर उन्हें जानता तक नहीं है। इस छोटे-से भ्रमण के बाद हम वापस स्कूल आ गए। बच्चों को इसमें बहुत आनन्द आया।

यहां मेरे विद्यार्थियों को भाषा के द्वारा परिवार की वास्तविक ज़रूरत पूरा करने का मौका मिला। उसके बाद उनमें से कुछ विद्यार्थियों ने अच्छे सुलेख की ओर खास ध्यान दिया। पत्र लिखने के अभ्यास से भाषा की कक्षा में उनकी रुचि बढ़ी, पाठ पढ़ने और लिखने में भी।

यहां मुझे यह बताते हुए प्रसन्नता हो रही है कि मेरे एक पोलियोग्रस्त विद्यार्थी द्वारा लिखे गए पत्र ने, शिक्षा विभाग के एक अधिकारी का ध्यान आकर्षित किया। और वह अधिकारी अब उस विद्यार्थी को इलाज और स्वास्थ्य लाभ के लिए कलकत्ता भेजने का प्रयत्न कर रहा है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि मेरे इस छोटे से प्रोजेक्ट के लिए यह एक बड़ा पुरस्कार है।

प्रकृति का अध्ययन और स्वास्थ्य

अभिभावकों तथा अन्य लोगों की मदद से मैंने विद्यार्थियों से स्थानीय जड़ी-बूटियां, पत्ते, बीज, फूल आदि इकट्ठे कराए और उनकी पहचान करना सिखाया। उनमें से कुछ हैं – कालमेघ, थानकुनि, जंडिस, वरंडा, कुलखड़ा, तुलसी, तेजपाता, हिंचे, नीम, बाशक, भृंगराज, शेफाली, पेंपे, गंधोबादल, ब्राह्मीशाक, पुदिना।

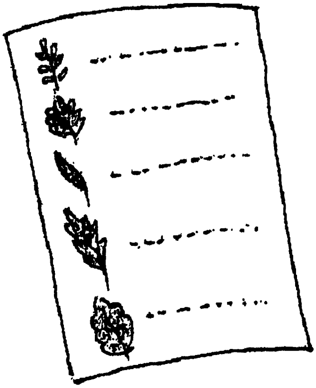

विद्यार्थियों ने पत्तियों तथा बीजों को अपनी अभ्यास पुस्तिका पर चिपकाया और उनका छोटा-छोटा विवरण लिखा तथा इनका उपयोग भी बताया। बाद में मुझे खबर मिली कि कुछ बच्चों ने कुछ खास बीज-पत्तियां आदि इकट्ठा करके अपनी मां से दवाई बनवाई और उसे खाकर सर्दी-जुकाम, मलेरिया आदि ठीक किया।

साहित्य सभा

शान्ति निकेतन के विश्वभारती स्कूल का अनुकरण करते हुए, मैंने नियमित साप्ताहिक साहित्य सभा शुरू करने का प्रबन्ध किया। विद्यार्थी इस सभा का आयोजन करते थे। वे इसका संचालन करते, कहानी या कविताएं पढ़ते, समाचार पत्रों, रेडियो, टी.वी. के ताज़ा समाचार सुनाते, क्रिकेट के खेल के समाचार भी सुनाते। वे गीत और गज़लें गाते तथा नाटक भी करते थे।

ध्यान का अभ्यास करना

स्कूल प्रार्थना के सामान्य सत्र के तुरन्त बाद, हमारी कक्षा की शुरुआत में मैंने मौन-ध्यान का अभ्यास शुरू कराया; जिसमें सारी कक्षा मेरे साथ किसी पेड़ के नीचे या खुले बरामदे मे बैठकर तीन से पांच मिनट तक, प्रतिदिन, ध्यान का अभ्यास करती थी। यह ध्यान लगाना बच्चों के व्यवहार के लिए आश्चर्यजनक काम करता है।

कहानी सुनाने की कक्षा

स्कूल के कार्यक्रम में एक घंटा कहानी सुनाने का होता है। मैं बच्चों को बहुत सी देशी-विदेशी पुस्तकों में से कहानियां पढ़कर सुनाती। कुछ कक्षाओं में बच्चों से भी कहानी सुनाने को कहा जाता।

बच्चे अपनी स्वयं की या मुझसे या किसी और से सुनी हुई कहानियां सुनाते। कहने की आवश्यकता नहीं है कि बच्चे इसका भरपूर आनंद लेते थे। साथ ही वे जनसमूह के सामने निडरता से तथा स्पष्ट बोलने की योग्यता भी प्राप्त करते थे।

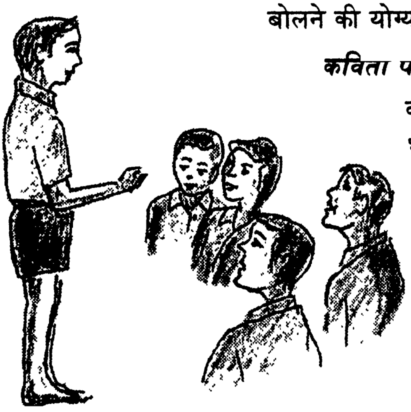

कविता पाठ करना

कहानी सुनाने की तरह, कविता की कक्षा भी होती थी, जिनका हम दिल से आनन्द लेते थे। कभी मैं पढ़ती थी, कभी बच्चे। हम सब सुन्दर तुकबन्दी और कविताओं के पाठ, लय व सुन्दरता का आनंद लेते थे। इस आनन्द के द्वारा हम भाषा और साहित्य में रुचि बढ़ाने का प्रयत्न करते।

दीवार पत्रिका की तैयारी

साहित्य सेवा में पढ़ी गई विद्यार्थियों की रचनाओं में से मैंने दीवार पत्रिका के लिए रुचिकर कहानियां, कविताएं तथा अन्य चीज़ें चुनीं। चित्रकला की कक्षा से मैंने चित्रों को इस पत्रिका के लिए छांटा। फिर उन्हें बच्चों से आर्ट-पेपर पर साफ-साफ लिखने और इन तस्वीरों से सजाने को कहा गया। बच्चों ने इसे दीवार पर टांग दिया, जिससे सारा स्कूल इसे पढ़ सके। यह पाठ्येत्तर गतिविधि बच्चों के लिए बहुत रुचिकर होती थी।

वार्षिक कैलेंडर की तैयारी

विद्यार्थियों को प्रति वर्ष एक बड़ा-सा वार्षिक कैलेंडर आर्ट पेपर पर बनाना सिखाया जाता था। बच्चे इसे तस्वीरों से सजाते थे, तथा इसमें महीने, हफ्ते, दिनांक तथा दिनों का विस्तृत ब्यौरा देते थे। हम इसे अपनी कक्षा में टांगते थे और आवश्यकता होने पर काम में लेते थे।

दैनिक डायरी लिखना

विद्यार्थियों को प्रतिदिन डायरी लिखने के लिए प्रेरित किया जाता है। वे इसे प्रसन्नता से करते हैं। वे इसे घर के काम की तरह हर रोज़ मुझे दिखाते हैं। उनकी डायरियों से मुझे बहुत-सी मज़ेदार खबरें मिलती हैं, जैसे घोंसले में से एक बार अंडे निकालने के बाद वापस उसमें रखना, ज़हरीले सांप को मारना आदि। हम अक्सर मनोरंजक डायरी, सारी कक्षा को पढ़कर सुनाते। इस काम में मैंने पाया कि बच्चों को अपने को व्यक्त करने की योग्यता और रुचि विकसित करने का अवसर मिलता है।

कातुम-कुतुम (दस्तकारी)

सुविख्यात कलाकार अबनिन्द्रनाथ ठाकुर ने यह प्रोजेक्ट शुरू किया और इसे यह नाम दिया। यह एक प्रकार से कला और दस्तकारी की प्रक्रिया है। इसमें बेकार चीज़ों जैसे – खाली माचिस, कागज़, कपड़ा और रिबन के टुकड़े, दीमक खाई लकड़ी आदि चीज़ों से कोई खिलौने आदि

बनाना होता है। इन चीज़ों को अगर ठीक से छांटकर जमाया जाए, तो एक सुनहरी पगड़ी पहने हारमोनियम बजाता हुआ आदमी बन सकता है। इस विचार को लेकर मेरे बच्चों ने उड़ती हुई चिड़िया, रेंगता हुआ सांप कूदता खरगोश, दौड़ता हिरन, फुदकता कंगारू, नाचती लड़किया आदि बहुत-सी चीज़ें बनाईं। बच्चों को इस काम में बहुत मज़ा आया। इस तरह के क्राफ्ट के काम में कोई भी खर्चा नहीं होता, लेकिन इससे बच्चों की रचनात्मक प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है। निरीक्षण करने की शक्ति का विकास होता है, सौन्दर्यबोध आता है, और औज़ारों को काम में लाने की योग्यता का विकास होता है।

अल्पना बनाना

स्कूल को सजाने के लिए मैं अक्सर यह प्रोजेक्ट कराती हूं। हम स्कूल के बरामदे में बिल्डिंग के सामने या किसी पेड़ के इर्द-गिर्द कोई उपयुक्त स्थान पसन्द करके वहां सफाई करते हैं और वर्षों पुरानी कला 'अल्पना' बनाते हैं। सरस्वती-पूजा, स्वतन्त्रता-दिवस आदि के अवसर पर हम अल्पना से सजाने के लिए विभिन्न रंगों, फूलों, बीजों यहां तक कि कोयले के चूरे, रेत, ईंटों के चूरे आदि का प्रयोग करते हैं। यह एक दूसरा क्षेत्र है जहां विद्यार्थियों ने खुद को स्वतंत्रता से अभिव्यक्त किया और अपनी कला की लोगों द्वारा प्रशंसा होते देखी।

रसोईघर उद्यान

मेरी कक्षा ने बैंगन, टमाटर, हरी मिर्च, पपीता और फूल आदि उगाकर एक छोटा-सा रसोईघर उद्यान बनाया। बच्चों को फावड़े से मिट्टी खोदने, खाद डालने, पौधे लगाने और पानी देने में बहुत अच्छा लगता है। इसके बाद मैंने देखा कि बच्चे पेड़-पौधों को पहले से ज़्यादा प्यार करने लगे हैं। वे पेड़-पौधों को पशुओं तथा दूसरों से बचाने के लिए उनकी रखवाली करते। बच्चों ने फालतू में फूल-पत्ते तोड़ना और पौधों को नष्ट करने की

अपनी पुरानी आदत, अपने-आप ही बदल दी। अपने छोटे-से बाग से उन्हें बैंगन, मिर्च आदि जो थोड़ी-सी उपज मिलती उसे वे अपने स्कूल के पीछे रहने वाले गरीब पड़ोसियों में बांट देते हैं।

चिड़ियों के पंख एकत्र करना

बच्चे सब स्थानीय चिड़ियों के पंख इकट्ठाकर अपनी अभ्यास-पुस्तिका में लगाते और साथ में उसकी पहचान, प्राप्ति का स्थान, चिड़िया का वर्णन, उसकी खाने, घोंसला बनाने, अंडे देने आदि आदतों के विषय में लिखते। इस काम से चिड़ियों की दुनिया में रुचि और प्रकृति के प्रति प्रेम बढ़ता है।

तितलियों के लार्वा इकट्ठे करना और उन्हें पालना

विद्यार्थी उस जगह मिलनेवाले कीटों और तितलियों के लार्वा इकट्ठा करते हैं, और उन्हें कांच के हवादार बर्तन में रखते हैं। हर रोज़ वे बर्तन को साफ करते और लार्वा को खाने के लिए खास पत्तियां देते। वे कांच के बर्तन का प्रतिदिन बाहर से निरीक्षण करते, उनकी बढ़त, लार्वा से प्यूपा बनना और अन्त में सुन्दर-सी तितली बनना देखते। वे इनके उचित विकास के लिए हर तरह की सावधानी रखते और अन्त में उसे उड़ जाने देते। यह काम हमेशा ही बच्चों को मनोरंजक और रुचिकर लगता। यह उनके दिल की गहराइयों में प्रकृति प्रेम उत्पन्न करता।

चित्रकला और मॉडल बनाना

मैंने मुक्त हस्तचित्र बनाने, उनमें रंग भरने और साथ ही मिट्टी से मॉडल बनाने, सिखाने शुरू कराए। कहने की आवश्यकता नहीं है कि स्कूल के पास इस उद्देश्य के लिए सामान मंगाने के लिए पैसा नहीं था। आर्ट पेपर, रंग, पेंसिल आदि का खर्च शिक्षक को स्वयं ही करना होता।

खेलकूद

अपनी कक्षा के दैनिक कार्यक्रम में मैंने खेलों का अभ्यास शुरू कराया, जिससे बच्चों का मनोरंजन हो और उनका स्वास्थ्य भी ठीक रहे। मैंने उन्हें ऊंची-कूद, लम्बी-कूद, साधारण

जिमनास्टिक, दौड़ना और कुछ खेलों का अभ्यास करने के लिए प्रेरित किया। कभी-कभी मैं विश्वभारती विश्वविद्यालय से खेल विशेषज्ञों को आमंत्रित करती। वे बच्चों को प्रशिक्षण देते तथा उनका मार्गदर्शन करते।

पहेलियों को तुरन्त हल करना

इस कक्षा में बच्चों को दो ग्रुप में बांट दिया जाता है और उनसे कुछ आसान से प्रश्नों के उत्तर पूछे जाते हैं या आसान पहेलियां हल करने को दी जाती हैं। सारी कक्षा का वातावरण प्रतिस्पर्धात्मक बना दिया जाता है, और प्रत्येक बच्चा प्रतियोगिता में भाग लेता है। यह कक्षा बच्चों को समस्या का सामना करने के लिए मानसिक तौर से सतर्क बनाती है।

स्क्रैप-बुक बनाना

यह एक जानी-पहचानी गतिविधि है जिसमें विद्यार्थी समाचार पत्रों, मैग्ज़ीन या और कहीं से भी फोटो और तस्वीरें काटकर अपनी स्क्रैप-बुक के पन्नों पर चिपकाते हैं और साथ में उसका छोटा-सा विवरण लिखते हैं। इसमें इस तरह के चित्र भी मिल जाते हैं जैसे – सचिन ने क्रिकेट में बाऊन्ड्री बनाई, प्रधानमंत्री जनता को सम्बोधित करते हुए, विध्वंसकारी रेल दुर्घटना, जंगलों, घरों, बस्तियों को नष्ट करता प्रचंड तूफान आदि।

नेतृत्व का प्रशिक्षण

प्रत्येक सप्ताह के लिए एक विद्यार्थी कक्षा का नेता चुन लिया जाता है। उसे कक्षा की व्यवस्था, साथी बच्चों का व्यवहार, कक्षा के बाहर क्राफ्ट, खेल आदि की व्यवस्था आदि करने का अधिकार दिया जाता है। स्कूल के समारोह, पूजा, स्वतंत्रता-दिवस, पिकनिक आदि में साथ के बच्चों का निर्देशन करने में उन्हें काफी काम करना होता है। इससे उसके अन्दर छिपे नेतृत्व के गुणों को विकसित होने का अवसर मिलता है।

हासिल हुई उपलब्धियां

प्राथमिक स्कूल में विद्यार्थियों की आवश्यकता पर आधारित गतिविधियां शुरू करने और उन पर तेरह वर्षों तक ईमानदारी से, लगातार, काम करने के परिणाम स्वरूप – शिक्षकों, विद्यार्थियों और गांव के लोगों, और इतना ही नहीं, स्कूल के वातावरण में भी कई परिवर्तन देखने को मिले:

1. विद्यार्थी प्रोजेक्ट की ओर आसानी से और अपनी ही दिलचस्पी से आकर्षित होते हैं।
2. विद्यार्थियों की यह दिलचस्पी स्कूल के सामान्य पाठ्यक्रम के अध्ययन में भी हस्तांतरित हो जाती है।
3. विद्यार्थियों को बोलने, पढ़ने-लिखने में आत्मविश्वास आया और उनके व्यक्तित्व के विकास में भी वृद्धि हुई।
4. कुछ ही वर्षों में स्कूल में दाखिल विद्यार्थियों की संख्या 160 से बढ़कर 275 हो गई।
5. विद्यार्थियों की उपस्थिति 30% से 85% हो गई। (1985 से 1998)
6. बच्चों का शुरू में ही स्कूल छोड़ना बिल्कुल बंद हो गया।
7. सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में सामान्य सुधार हुआ। इस वजह से अच्छी संख्या में विद्यार्थियों को हाईस्कूल में दाखिले के अवसर मिल रहे हैं। यह परिस्थिति 1985 की परिस्थिति के बिल्कुल विपरीत है।

स्कूल के शिक्षकों में परिवर्तन

1. एक कक्षा के सक्रिय और वास्तविक सच्चे काम ने अन्य शिक्षकों को, उनका काम करने का अनुपयुक्त तरीका बदलने के लिए सीधे प्रभावित किया।
2. अन्य शिक्षक अपनी कक्षाओं में अधिक दिलचस्पी लेते पाए गए। और वे भी अपनी कक्षाओं में इसी तरह के प्रोजेक्ट करने की कोशिश करने लगे।
3. स्कूल में शिक्षकों की उपस्थिति मे बहुत सुधार हुआ।
4. शिक्षक पहले से कहीं अधिक सक्रिय पाए गए।
5. शिक्षकों ने गलत व्यवहार जैसे – बच्चों के टिफिन में से हिस्सा लेना, कक्षा में स्वेटर बुनना, सफेद बाल तुड़वाना, अपने -आप ही बन्द कर दिया।

रोमा देव हालदार: विनया भवन, विश्व भारती, शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल।
पुष्पा अग्रवाल: स्वतंत्र अनुवादक, जयपुर में रहती हैं।
इस लेख के सभी चित्र श्री **वी. एम. भोंडे** ने बनाए हैं। वे होशंगाबाद में रहते हैं।

एकलव्य का प्रकाशन

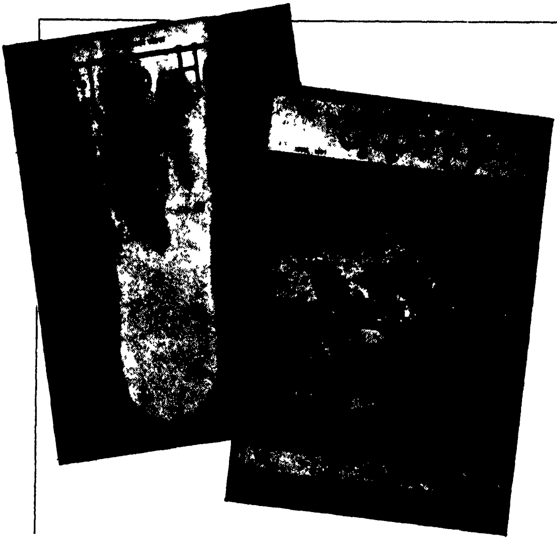

बारिश क्यों होती है? चाँद पर कैसे जाते हैं? इस चिड़िया का नाम क्या है? बुखार क्यों आता है? ऐसा क्यों? वह कैसे? यह क्या? . . . . .

ऐसे ही ढेरों सवाल आपके बच्चे भी आपसे पूछते होंगे। और आप ज़रूर चाहते होंगे कि उन्हें इनका माकूल जवाब मिले। उनके बढ़ते मन-मस्तिष्क को कुछ पढ़ने, कुछ सोचने, कुछ रचने और अपने सवालों के जवाब खुद ढूँढने की प्रेरणा मिले।

चकमक भी यही चाहती है कि ऐसी प्रेरणा और ऐसे मौके हर बच्चे को मिलें। इसीलिए इन्हीं बच्चों की रचनाओं को जगह देते, इनके सवालों के जवाब ढूँढते हर अंक में कुछ करने, कुछ बनाने की सामग्री संजोते यह आज अपना 14 सालों का सफर पूरा करके 168वें अंक में पहुँच चुकी है।

आप भी अपने बच्चे को एक अच्छा साथी दे सकते हैं . . .

चकमक का तोहफा देकर।

एक अंक : 10 रुपए   वार्षिक : 100 रुपए   आजीवन : 1000 रुपए

अपने ड्राफ्ट या धनादेश ***'एकलव्य'*** के नाम पर ई–1/25, अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462 016 (म.प्र.) के पते पर भेजें।

कुछ खेल एंज़ाइम के साथ

भोजन के पाचन में एंज़ाइमों की अहम भूमिका होती है। एंज़ाइम अपने काम को पूरा कैसे करते हैं यह जानना हो तो सोख्ता कागज़, अकाव का दूध, चावल की माढ़ जैसी आसानी से मिल सकने वाली चीज़ों को इकट्ठा कर लीजिए और हां, अपने दो-चार विद्यार्थी साथ हों तो इस प्रयोग का मज़ा और भी बढ़ जाएगा।

किशोर पंवार

आपने अनुभव किया होगा कि जब हम पोहे, परमल या गेहूं के दाने खाते हैं तो चबाते-चबाते ही मुंह में मिठास आ जाती है। इन सब में शर्कराएं तो खास कुछ होती नहीं हैं, मुख्यत: कार्बोहाइड्रेट और अल्प मात्रा में प्रोटीन ही मौजूद रहते हैं। तो फिर कहां से आ जाती है हमारे मुंह में मिठास? दरअसल मिठास पैदा करने का यह कमाल हमारी लार में उपस्थित पाचक एंज़ाइम का है। आइए, लार के साथ एक प्रयोग करके देखें इस एंज़ाइम का कमाल।

पहला प्रयोग

इसके लिए एक सोख्ता कागज़, स्टार्च का घोल या चावल की माढ़ और आयोडीन के घोल की ज़रूरत होगी। सब चीज़ें ऐसी हैं जो आसानी से मिल जाती हैं।

सबसे पहले सोख्ता कागज़ को स्टार्च के घोल या चावल की माढ़ में डूबाकर सुखा लो। अब एक कटोरी में या किसी ढक्कन में थोड़ी-सी लार लो। इस लार में माचिस की तीली डूबाकर सोख्ता कागज़ पर लार से अपना या अपने दोस्त का नाम लिख लो। लार लगाने में किसी तरह की कंजूसी नहीं होनी चाहिए।

अब लगभग आधे घंटे तक इंतज़ार करो; फिर नाम लिखे हुए सोख्ता कागज़ को आयोडीन के हल्के घोल में डूबाकर देखो। क्या हुआ?

और ऐसा क्यों हुआ होगा इस पर थोड़ा सोच-विचार करो। हां, संकेत देने के लिए एक छोटी-सी बात ज़रूर बता देते हैं कि हमारे मुंह में मंड के पाचन की शुरुआत भी ऐसे ही होती है; और उस प्रक्रिया में जो शर्करा बनती है उसी से हल्की-हल्की मिठास महसूस होती है हमें।

एक और प्रयोग

पाचक एंज़ाइम के साथ ऐसा ही एक मज़ेदार प्रयोग और है जिसे करने के लिए सिर्फ कैमरे में इस्तेमाल होने वाली एक्सपोज़्ड नेगेटिव फिल्म (ब्लैक एंड वाइट हो तो बेहतर) और अकाव के पौधे का दूध भर चाहिए। प्रयोग शुरू करने के पहले इंजेक्शन की खाली शीशी में अकाव का थोड़ा-सा दूध भर लीजिए। इसके लिए आपको दो-तीन पत्ते तोड़कर उनसे दूध इकट्ठा करना होगा। पत्ता तोड़ते ही अकाव का दूध टपकने लगता है। बस, उसे शीशी में भर लीजिए। इस दूध से

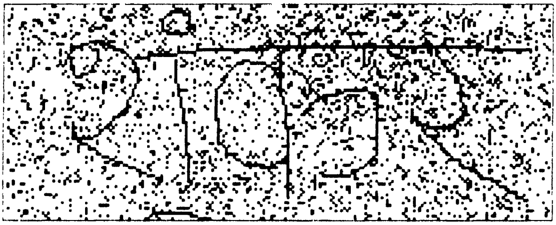

चुनाव 1999

कागज़ और फिल्म पर लिखना: सोख्ता कागज़ को चावल की माढ़ या स्टार्च के घोल में डूबोकर सुखा लो। इस सूखे कागज़ पर अपनी मुंह की लार से कुछ लिखो और आधे घंटे बाद देखो, कागज़ पर क्या दिखता है।
इसी तरह पुरानी कैमरे की नेगेटिव पर अकाव के दूध से चित्र या नाम वगैरह लिख लो और आधे घंटे बाद नेगेटिव को पानी से धोकर देखो। नेगेटिव पर क्या उभर आया है?

नेगेटिव के काले हिस्से पर नाम लिख सकते हैं या कोई फूल-पत्ती भी बना सकते हैं। (कैमरे की फिल्म का शुरुआत या अंत वाला एकदम काला हिस्सा इस काम के लिए सबसे अच्छा रहेगा।)

लगभग आधे घंटे बाद इस नेगेटिव को पानी में अच्छे से हिलाकर बाहर निकाल लीजिए। अब ज़रा ध्यान से देखिए, छप गया न आपका बनाया हुआ नाम या चित्र इस नेगेटिव पर। इस बार क्या हुआ होगा? हम बात तो कर रहे थे एंज़ाइम की लेकिन यहां तो सिर्फ फिल्म की नेगेटिव और अकाव का दूध ही है।

लगभग इसी तरह की चित्रकारी कभी-कभी पुरानी ब्लैक एंड वाइट फिल्मों पर दिख जाती है। पहले तो मुझे लगता था कि फिल्म पर खरोंच आ गई होगी लेकिन प्रोटीन के पाचन के बारे में और फफूंदों में प्रोटीन को पचाने वाले एंज़ाइम की जानकारी मिलने पर यह समझते देर न लगी कि यह चित्रकारी वास्तव में उन फफूंदों की है जिन्होंने फिल्म पर लगे जिलेटिन (जो प्रोटीन से बना होता है) को अपनी कारगुज़ारियों से पचा डाला।

अकाव के दूध में उपस्थित 'प्रोटियोलायटिक एंज़ाइम' भी यही करता है। जहां-जहां आपने अकाव के दूध से लिखा, वहां पर यह एंज़ाइम नेगेटिव के प्रोटीन से क्रिया करता है जिससे फिल्म पर बना चित्र उभर आता है।

किशोर पंवार: शासकीय महाविद्यालय सेंधवा में वनस्पति विज्ञान पढ़ाते हैं।

सवालीराम ने पूछा सवाल

सवाल: हमारी आंखों से आंसू क्यों निकलते हैं?

कक्षा 6 के अनेक छात्र

एस. एन. आर. कॉन्वेंट स्कूल, नंदरवाड़ा, सिवनी मालवा, ज़िला होशंगाबाद।

है न मज़ेदार सवाल? जवाब खोजने में आप भी हमारी मदद कीजिए। हो सकता है आप इस सवाल के किसी एक पहलू के बारे में जानते हों। फिर भी आप उस जानकारी को हमें लिख भेजिए। हमारा पता है:

संदर्भ,
द्वारा एकलव्य
कोठी बाज़ार, होशंगाबाद म. प्र.
पिन: 461001

शैक्षिक नवाचार और प्रयोगशील शिक्षक

दिनेश भट्ट

सभी शिक्षकों में नवाचार की संभावनाएं मौजूद होती हैं, लेकिन औसत शिक्षक यह मानकर चलता है कि उसका काम पाठ्यक्रम पढ़ा देना और बच्चों को परीक्षा के लिए तैयार करना है। बच्चे की उत्सुकता का विकास शिक्षक न अपनी ज़िम्मेदारी समझता है, न स्कूल में ऐसी परिस्थितियां हैं, जिनमें वह इस ज़िम्मेदारी को निभा सके।

कई बार ऐसा महसूस होता है कि वर्तमान में शिक्षा का लक्ष्य केवल स्कूल में भर्ती होना, कार्यक्रमों में भाग लेना और प्रमाण पत्र प्राप्त करना हो गया है। लेकिन इन हालात के पीछे कुछ बुनियादी कारण हैं, जिसमें शिक्षण की दकियानूसी संस्कृति और परम्परागत पाठ्य पुस्तकें भी शामिल हैं। स्कूल केवल संस्थाओं के रूप में फैल रहे हैं और वहां भी जानकारी देने पर अनावश्यक ज़ोर है। शिक्षक बच्चों के प्रति सरस और प्रयोगशील नहीं है।

फिर भी कुछ शिक्षक ऐसे भी हैं, जिन्होंने प्रयोग, शोध और क्रियात्मक अनुसंधान पर आधारित नवाचारों से शैक्षिक स्तर को रूपांतरित ही नहीं किया बल्कि शैक्षिक चिंतन से कर्म का चरित्र बदलने की कोशिश की है। एक समय था, जब स्कूलों की मौत की घोषणा कर दी गई थी लेकिन फ्रोबेल की गीत-शैली, मांटेसरी की खेल-शैली और गिजु भाई की कहानी एवं क्रिया-शैली ने स्कूलों को पाठ्यक्रमों व पुस्तकों की जटिलता से मुक्त कर उसे बालकेन्द्रित रूप दिया। जॉन होल्ट

ने अपनी पुस्तक 'हाऊ चिल्ड्रन फेल' में संस्थायी स्वरूप की समूची कल्पना को बाल सुलभ क्रियाओं के आनंद से बदलने की प्रक्रिया विकसित की।

उक्त बातों का आशय शिक्षा में नवाचार के कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर चर्चा करना है। शिक्षा में नवाचार की अहम भूमिका है। नवाचार बच्चों के सहज विकास की प्रकिया के साथ ताल-मेल बिठाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, एक उदाहरण से इस बात को समझने की कोशिश करते हैं।

कंचे . . . अंक कार्ड और गणित

गांव में बच्चे कंचे खेलते ही हैं। और यदि शिक्षक वहां से निकले तो वे भाग खड़े होते हैं। मुझे देखकर भी कंचे खेलते बच्चे भाग जाते थे। स्कूल के मैदान में भी बच्चे कंचे खेलते थे। मैंने एक दिन कुछ बच्चों को कंचे खेलते हुए पकड़ लिया और उनसे कहा, "मैं भी तुम्हारे साथ कंचे खेलूंगा।" पहले तो वे डर गए लेकिन जब मैं गणित के अंक कार्ड लेकर उनके साथ खेलने लगा तो वे खुश हुए। गोले में कंचों का ढेर रख दिया। एक बच्चे को अंटे से मारने को कहा। उसने अंटा मारा, कंचे बिखर गए। मैंने कुछ बच्चों से बिखरे कंचे बुलवाए और कुछ से गोले में बचे शेष कंचे। मैंने कहा – जिनके हाथ में जितने कंचे हैं, वह उतने का ही अंक कार्ड ले आए। बच्चों को मज़ा आया।

जब बच्चे अंक कार्ड ले आए तो मैंने कहा लाइन से खड़े हो जाओ और अपने से पहले वाले लड़के से अंक पूछकर अपने अंक में जोड़ो और अगले बच्चे को बताओ। ऐसा सभी करेंगे। बच्चों को इस खेल में मज़ा आने लगा और मैं इसी बहाने अंक पहचानने एवं जोड़ने के अभ्यास कराने लगा। दो कंचों के बीच कदम से, बित्ते से और लकड़ी से नापने को उन्हें कहता तथा बड़े सहज ढंग से अमानक इकाइयों का ज्ञान उन्हें दे देता। बच्चे अब निडर होकर कंचे खेलते थे, और उनमें मेरे प्रयोग जुड़े रहते थे ।

क्या हम आमतौर पर बच्चों की स्वाभाविक क्रियाएं देखकर उन्हें समझने की कोशिश करते हैं? क्या यह देखने की कोशिश करते हैं कि बच्चे अपनी गतिविधियों से क्या सीख रहे हैं? यदि हम यह देख पाएं तो ढेरों नवाचार और शिक्षण विधियां अपने आप जन्म लेती हैं।

नवाचार की असीम संभावनाएं

सभी शिक्षकों में नवाचार की संभावनाएं मौजूद होती हैं, लेकिन औसत शिक्षक यह मानकर चलता है कि उसका काम पाठ्यक्रम पढ़ा देना और बच्चों को परीक्षा के लिए तैयार करना है। बच्चे की उत्सुकता का विकास शिक्षक न अपनी ज़िम्मेदारी समझता है, न स्कूल में ऐसी परिस्थितियां हैं, जिनमें वह इस ज़िम्मेदारी को बखूबी निभा सके।

क्या हम आमतौर पर बच्चों की स्वाभाविक क्रियाएं देखकर उन्हें समझने की कोशिश करते हैं? क्या यह देखने की कोशिश करते हैं कि बच्चे अपनी गतिविधियों से क्या सीख रहे हैं? यदि हम यह देख पाएं तो ढेरों नवाचार और शिक्षण विधियां अपने आप जन्म लेती हैं; जिनसे हम बच्चों को बोझिल, उबाऊ और अरुचिकर शिक्षण से हटाकर आनंददायी और रुचिकर शिक्षा दे सकते हैं।

नवाचार अपने काम के प्रति रचनात्मक, ज़िम्मेवार, ठोस व व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने का एक तरीका होता है। प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री जॉन होल्ट ने लिखा है कि उनके छात्रों ने 'भिन्न' के बारे में जो सवाल उठाया था, उसका सही उत्तर ढूंढ पाने में उन्हें तेरह वर्ष लग गए ।

ऐसे सवाल, ऐसे शोध व खोज ही शिक्षक के रूप में काम करने का आनंद है। अधिकांश शिक्षकों द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली शिक्षण पद्धतियों में विद्यार्थियों के लिए कोई चुनौती नहीं होती। अधिकतम कक्षाओं में पठन-पाठन की प्रक्रिया की विशेषता है, जानकारी का हस्तांतरण – न कि प्रयोग, अनुसंधान या अवलोकन। जबकि शिक्षकों के पास उनके जीवंत अनुभव होते हैं जिन्हें वे शैक्षिक चिंतन में उतारकर नवाचार के रूप में वास्तविक स्वरूप प्रदान करें तो बच्चे अपनी नीरसता और उदासी को भेदकर उल्हास और जिज्ञासा की धारा में बह सकते हैं।

दिशाओं का ज्ञान

मैंने एक बार महसूस किया कि मेरी शाला के अधिकांश विद्यार्थियों को दिशाओं का ज्ञान नहीं है। मैंने एक दिन सुबह की प्रार्थना के बाद सभी से पूछा, "सूरज किस तरफ से निकलता है?" बच्चों ने हाथ से इशारा करके बताया। मैंने कहा, "सभी उस तरफ घूम जाओ।" फिर मैंने कहा, "अपनी पीठ की तरफ घूम जाओ।" फिर कहा, "अपना बायां हाथ उठाओ।" कुछ ने बायां हाथ उठाया लेकिन कुछ ने दायां हाथ उठा दिया। मैंने उस दिन सिर्फ बायां और दायां का अभ्यास कराया। दूसरे दिन मैंने सूरज निकलने की तरफ, पीठ की तरफ, बाएं और दाएं हाथ

की तरफ घूमने के अभ्यास कराए। तीसरे दिन मैंने बताया कि जहां से सूरज निकलता है उसे पूर्व दिशा, जहां डूबता है उसे पश्चिम दिशा कहते हैं। पूर्व की तरफ मुंह कर खड़े होने पर बायें हाथ की तरफ उत्तर दिशा और दाईं तरफ दक्षिण दिशा होती है। मैं दिशा का नाम लेता, बच्चे उस तरफ मुड़ते जाते। पंद्रह दिन तक दिशाओं का खेल चलता रहा, उससे जुड़े प्रश्न पूछे जाते रहे, मसलन किस दिशा में क्या है? वह चीज़ किस दिशा में है? इत्यादि। कक्षा तीन में दिशा पर एक गीत था। रोज़ प्रार्थना के बाद उसे बच्चों से दोहराना शुरू किया, एक महीने में सभी कक्षाओं के बच्चों को खेल-खेल में दिशाओं का ज्ञान पूरी तरह आ गया। मुझे लगा यह तो सामूहिक दक्षता है। मैंने फिर ऐसी कई सामूहिक दक्षताओं को खोजा और उन पर प्रयोग करना शुरू कर दिए।

उक्त उदाहरण बताने का उद्देश्य है कि नवाचारों के माध्यम से हम परम्परागत शैक्षिक जड़ता को तोड़ते हुए दक्षताओं को विकसित करने का प्रयास करें। इसके लिए आवश्यक होगा कि शिक्षक सृजनात्मक एवं अध्ययन - शील हों क्योंकि कुछ शिक्षक अनुभव से सीखते हैं, कुछ अध्ययन से, तो कुछ सृजन की साधना से।

> यशपाल समिति की सिफारिश में बस्ते के बोझ को कम करने के लिए जो सुझाव दिए गए थे उसमें पाठ्यक्रम निर्माण में शिक्षकों को ज़्यादा अवसर देने एवं शिक्षकों के नवाचारों को प्राथमिकता देने पर ज़ोर दिया गया था।

शिक्षकों को पर्याप्त मौके हों

यशपाल समिति की सिफारिश में बस्ते के बोझ को कम करने के लिए जो सुझाव दिए गए थे उसमें पाठ्यक्रम निर्माण में शिक्षकों को ज़्यादा अवसर देने तथा शिक्षकों के नवाचारों को प्राथमिकता देने पर ज़ोर दिया गया था; जिस पर अमल भी हुआ और कुछ अनुकूल परिणाम भी आए। शिक्षण को बालकेन्द्रित बनाने के लिए आवश्यक है कि शिक्षक की कल्पना, स्वतंत्रता, स्वायत्ता को न केवल प्रोत्साहन मिले बल्कि उसे सम्मान भी मिले।

नवाचार के लिए बच्चों की भाषा का पक्ष अत्यंत महत्वपूर्ण है, इसके लिए अनेकानेक प्रयोग हुए हैं क्योंकि बच्चा भाषा के ज़रिए अपनी बात प्रकट करता है, दूसरों की बात समझता है;

तथा संवाद करता है। ऐसे विद्यार्थियों की संख्या बहुत है, जो सरल भाषा नहीं लिख पाते। यह एक गंभीर समस्या है। इस कमी को दूर करने के लिए कई नवाचार किए जा सकते हैं। भाषा शिक्षण को रटने की प्रवृत्ति से निकालने के लिए कुछ नवाचार वर्तमान में प्राथमिक कक्षाओं में चल रहे हैं। मसलन शब्दों से वर्ण सीखना, शब्द-कार्ड एवं चित्र-कार्डों से शब्द पहचानना, वाक्य बनाना। सरल से परिचित तथा परिचित से अपरिचित की तरफ ले जाने के ये प्रयोग काफी सार्थक रहे हैं ।

भाषा और व्याकरण

ध्यान देने वाली बात यह है कि बच्चा भाषा ऐसे समय और संदर्भ में सीखता है, जहां उसका ध्यान भाषा पर केन्द्रित नहीं है। इसलिए यह ज़रूरी होता है कि कक्षा के अन्दर ही विभिन्न प्रकार के संदर्भ बनाए जाएं जिनके आधार पर बच्चे भाषा को विविध तरीकों से उपयोग करने का अभ्यास कर सकें।

व्याकरण एक कठिन विषय माना जाता है, और इस विषय से विद्यार्थियों को सहज ही कोई दिलचस्पी भी नहीं है। संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, लिंग इत्यादि की परिभाषाएं रटी तो बड़ी जल्दी जा सकती हैं, लेकिन आसानी से समझ नहीं आती। मुझे गिजु भाई की पुस्तक 'दिवा-स्वप्न' का एक अंश याद आ रहा है, जिसमें शिक्षक व्याकरण को बड़े ही रोचक ढंग से पढ़ाता है। नवाचार की चर्चा में यह उपयुक्त उदाहरण है।

इस अंश में शिक्षक सबसे पहले तख्ते पर लिख देता है – "उठो, बैठो, दौड़ो, खेलो इत्यादि।" फिर वो लड़कों से ये क्रियाएं करने को कहता है। लड़के बड़े आनंद से उन्हें करते हैं। फिर शिक्षक कुछ कार्डों में ये क्रियाएं लिखकर उनमें बांट देता है; करने और समझने को कहता है। फिर छोटे-छोटे प्रश्न पूछता है। मसलन जीवन कौन-सी क्रिया करता है?

संज्ञा पढ़ाने के लिए उसने लड़कों से कहा, "जिस चीज़ का कोई नाम हो तुम उसे ले आओ। जाकर पूछो तेरा क्या नाम है? अगर कोई नाम है, तो ले आओ।" लड़के झट समझ गए। वे नाम वाली चीज़ें लाने लगे। शिक्षक ने एक पेटी में संज्ञा के कई कार्ड डाल दिए, लड़के उसमें से संज्ञा छांटने लगे। फिर उसने क्रिया पदों के कार्डों की पेटी और लाकर रख दी। दूसरा खेल बताया – क्रिया पद के योग्य संज्ञा ढूंढो और संज्ञा के योग्य क्रिया पद ढूंढो। उदाहरणार्थ *'घोड़ा'*' शब्द लेकर *'दौड़ता है'*।

इसके बाद उसने बच्चों से अलग-अलग रंग की पेंसिल बुलवाई और प्रत्येक छात्र से पूछा, "तुम खास कौन-

सी पेंसिल लाए हो?"

बच्चों ने कहा, "लाल, नीली, पीली, हरी.......।"

शिक्षक ने कहा, "ये खास शब्द विशेषण हैं।"

उसने खेल बताया – संज्ञा का विशेषण ढूंढो और विशेषण की संज्ञा ढूंढो।

व्याकरण के अगले क्रम में उसने बच्चों से पूछा – 'मैं' अर्थात कौन? बच्चों ने शिक्षक का नाम बता दिया। इसी प्रकार उसने तुम, वह, वो अर्थात कौन पूछा और इस प्रकार सर्वनाम समझाया।

गिजु भाई की इस किताब में व्याकरण को गतिविधि आधारित बड़े रोचक ढंग से विस्तार के साथ समझाया गया है, मैंने यहां केवल आंशिक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। वे पहले परिभाषा नहीं रटवाते; क्रिया विधि के बाद बच्चे स्वयं परिभाषा बना लेते हैं। और व्याकरण जैसा रट्टू विषय रोचक ही नहीं हो जाता बल्कि बच्चों में सहज ढंग से व्याकरण की समस्त दक्षताएं आ जाती हैं। यह है शिक्षक के नवाचार का कमाल।

नवाचार, बस एक सीढ़ी है

इसी प्रकार गणित में भी बुनियादी नियम और सिद्धांत सिखाने पर ज़ोर होना चाहिए, यह ज़रूरी नहीं कि बच्चे शुरू में ही सब समझ जाएं।

गणित में भी ऐसे नवाचारों की ज़रूरत है, जिनमें सवाल हल कर पाने के दबाव और डर के बिना स्वाभाविक तौर पर गणित की क्रियाएं करने के मौके हों। कक्षा में ऐसी गतिविधियां हों जिनसे बच्चों को रोचकता का एहसास हो, जिनमें कुछ करना पड़े और करने के बाद सोचना, समझना और समझाना पड़े।

आधुनिक विज्ञान शिक्षण में 'प्रयोग करके सीखना' और 'प्रत्यक्ष तथा व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करना', दोनों महत्वपूर्ण पक्ष स्थान बना रहे हैं। ऐसे अनुभव नवाचारों से ही संभव हैं। व्यावहारिक अनुभव अधिक उपयोगी और स्थाई होते हैं। इन अनुभवों का विविध परिस्थितियों में स्थानान्तरण भी किया जा सकता है।

विकास और सुधार की कोई सीमा नहीं होती। इसलिए शिक्षक को मालूम होना चाहिए कि नवाचार एक सीढ़ी होती है, जिस पर चढ़कर आगे के रास्ते खुद-ब-खुद मिलते हैं।

एक बात और ध्यान देने योग्य है कि नवाचार अधपके न हों। नवाचार सैद्धांतिक अध्ययन से उभरे हों जो व्यवहार में प्रचलित परम्पराओं से भी जुड़ सकें; और उनके ज़रिए पढ़ाने के तरीकों में विविधता लाई जा सकती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नवाचारों से अध्यापक का शैक्षिक पुनरुत्थान होता है, और यह पुनरुत्थान तभी संभव है, जब उसे अध्ययन, प्रयोग, लेखन, सृजन आदि में आत्मीय रूप से जोड़ा जाए। उसके लिए अकादमिक अवसर उपलब्ध किए जाएं, उसके कार्य को प्रारम्भिक स्तर पर प्रोत्साहन दिया जाए।

यदि शिक्षा का अर्थ बालक का सर्वांगीण विकास है, तो शिक्षक के प्रत्येक नवाचार में बच्चे की सहभागिता आवश्यक है। तथा यह भी ज़रूरी है कि शिक्षक अपने आचरण व चरित्र में ऐसा परिवर्तन लाए जिससे यह लगे कि शिक्षक, वेतन भोगी पद नहीं बल्कि साधना और सृजना से जुड़ा एक समग्र व्यक्तित्व है।

दिनेश भट्ट: शिक्षक हैं। परासिया, ज़िला छिंदवाड़ा के निवासी हैं।

सिर्फ पांच सेकेंड . . .

नीचे संख्याओं के दो समूह दिए गए हैं। आपको पांच सेकेंड के भीतर यह बताना है कि दोनों का योगफल समान होगा या अलग-अलग?

987654321	123456789
87654321	12345678
7654321	1234567
654321	123456
54321	12345
4321	1234
321	123
21	12
1	1

छिपा रहस्य

क्वेंटीन रेनॉल्ड

अनुवाद: अरविंद गुप्ता

कनाडा में मांट्रियल नाम का बड़ा शहर है। वहां कई छोटी-छोटी सड़कें भी हैं। उनमें से एक है एडवर्ड स्ट्रीट। उस सड़क को पियरे जितनी अच्छी तरह से और कोई नहीं जानता था। पिछले तीस सालों से पियरे ही उस सड़क पर बसे सभी परिवारों को दूध बांटता था। पिछले पंद्रह सालों से पियरे की दूध गाड़ी को एक बड़ा सफेद घोड़ा खींचता था। उस घोड़े का नाम था जोज़फ। शुरू में जब वह घोड़ा दूध कंपनी के पास आया तब उसका कोई नाम न था। कंपनी ने पियरे को सफेद घोड़े के इस्तेमाल की इजाज़त दे दी। पियरे ने प्यार से घोड़े की गर्दन को सहलाया और उसकी आंखों में झांक कर देखा।

"यह एक समझदार, भला और बहुत वफादार घोड़ा है।" पियरे ने कहा।

"मैं इसका नाम संत जोज़फ के नाम पर रखूंगा क्योंकि वे एक नेक और दयालू इंसान थे।"

साल भर के अंदर ही घोड़े को सड़क का पूरा रास्ता एकदम रट गया।

पियरे अक्सर शेखी बघारता, "मैं तो लगाम छूता तक नहीं हूं, मेरे घोड़े को तो लगाम की ज़रूरत ही नहीं है।"

रोज़ाना सुबह पांच बजे तड़के ही पियरे दूध कंपनी में पहुंच जाता। तब गाड़ी में दूध लादा जाता और फिर जोज़फ उसे खींचता। पियरे अपनी सीट पर बैठते ही जोज़फ को पुचकारता और घोड़ा अपना मुंह उसकी ओर घुमा देता। आसपास खड़े अन्य ड्रायवर कहते, "सब कुछ ठीक-ठाक है, पियरे जाओ।" इसके बाद पियरे और जोज़फ इत्मीनान के साथ सड़क पर निकल पड़ते।

बिना किसी इशारे के गाड़ी अपने-आप ही एडवर्ड स्ट्रीट पहुंच जाती। फिर घोड़ा सबसे पहले घर पर रुकता और पियरे को नीचे उतरकर दरवाज़े के सामने एक बोतल दूध रखने के लिए करीब तीस सेकेंड की मोहलत देता। फिर दूसरे घर पर रुकता।

इस तरह पियरे और घोड़ा पूरी एडवर्ड स्ट्रीट की लंबाई पार कर फिर गाड़ी घुमाकर वापस चल पड़ते। सचमुच जोज़फ एक बहुत होशियार घोड़ा था।

अस्तबल में पियरे जोज़फ की तारीफ करते न थकता, "मैं कभी उसकी लगाम छूता तक नहीं हूं। कहां-कहां रुकना है यह उसे अच्छी तरह मालूम है। अगर जोज़फ घोड़ा गाड़ी खींच रहा हो तो मेरी जगह कोई अंधा आदमी होता तो भी काम चल जाता।"

बरसों तक यही सिलसिला चलता रहा। पियरे और जोज़फ धीरे-धीरे एक साथ बूढ़े होने लगे। पियरे की मूंछें अब पक कर सफेद हो गई थीं। जोज़फ भी अब अपने घुटनों को उतना ऊंचा नहीं उठा पाता था। अस्तबल के सुपरवाइज़र जैक को उनके बुढ़ापे का पता तब चला जब एक दिन पियरे लाठी के सहारे चलता हुआ आया।

"क्या बात है पियरे?" जैक ने हंसकर पूछा, "क्या तुम्हारी टांगों में दर्द है?"

"हां जैक, मैं बूढ़ा हो रहा हूं और अब पैर भी दर्द करने लग गए हैं।" पियरे ने जवाब दिया।

"तुम अपने घोड़े को दरवाज़े पर दूध की बोतलें रखना भर बस और

सिखा दो। बाकी सारा काम तो वह करता ही है।" जैक ने कहा।

एडवर्ड स्ट्रीट पर बसे परिवारों के नौकरों को मालूम था कि पियरे पढ़ नहीं सकता इसलिए वे उसके लिए कोई चिट्ठी नहीं छोड़ते थे। अगर कभी दूध की एक और बोतल की ज़रूरत होती तो वे घोड़ा गाड़ी की आवाज़ सुनकर दूर से ही चिल्लाते, "पियरे आज एक और बोतल देना।"

पियरे की याद्दाश्त बहुत अच्छी थी।

अस्तबल वापस पहुंचकर बिना गलती के वह जैक को दूध का सारा हिसाब बता देता और जैक अपनी डायरी में पूरा हिसाब तुरंत नोट कर लेता था।

*

एक दिन दूध कंपनी का मैनेजर सुबह-सुबह अस्तबल का मुआयना करने पहुंचा। जैक ने पियरे की ओर इशारा करते हुए मैनेजर से कहा, "ज़रा देखिए तो पियरे किस तरह अपने घोड़े से बात करता है। और घोड़ा भी किस प्रकार अपना मुंह घुमाकर पियरे की बात सुनता है। ज़रा घोड़े की आंख की चमक तो देखिए, मुझे लगता है कि इन दोनों में कोई गहरी दोस्ती है। उस छिपे रहस्य को बस यही दोनों जानते हैं। कभी-कभी ऐसा लगता है जैसे ये दोनों हम पर हंस रहे हों। पियरे भला आदमी है पर अब बेचारा बूढ़ा हो रहा है। अच्छा यही होगा कि अब आप उसे रिटायर कर दें और उसकी पेंशन बांध दें।" उसने मैनेजर से कहा।

"बात तो तुम्हारी ठीक है। पियरे अपना काम तीस साल से कर रहा है और कभी कहीं से

कोई शिकायत नहीं आई है। उससे कहो अब वह घर बैठकर आराम करे। उसे हर महीने पूरी तनख्वाह मिलती रहा करेगी।" मैनेजर ने कहा।

परंतु पियरे ने रिटायर होने से इंकार कर दिया। इस बात को सोचकर कि वह रोज़ अपने प्यारे घोड़े जोज़फ से नहीं मिल पाएगा उसे गहरा धक्का लगा। उसने जैक से कहा, "हम दोनों ही अब बूढ़े हो रहे हैं। हम दोनों अगर इकट्ठे ही रिटायर हों तो अच्छा होगा। मैं आपसे यह वायदा करता हूं कि जब मेरा घोड़ा रिटायर होगा तब मैं भी काम छोड़ दूंगा।"

जैक एक भला आदमी था, वह पियरे की बात समझ गया। पियरे और जोज़फ के बीच रिश्ता ही कुछ ऐसा था जिसे देख दुनिया मुस्कराने लगे। ऐसा लगता था मानों दोनों एक-दूसरे का सहारा हों। जब पियरे गाड़ी की सीट पर बैठा हो और जोज़फ गाड़ी खींच रहा हो तब दोनों में से कोई भी बूढ़ा नहीं लगता। परंतु काम खत्म होने के बाद पियरे धीरे-धीरे लंगड़ाते हुए सड़क पर इस तरह चलता जैसे कि कोई बहुत बूढ़ा आदमी चल रहा हो। और उधर घोड़े का मुंह भी लटक जाता और वह बड़ा थका-हारा-सा अस्तबल वापस जाता।

एक दिन सुबह-सुबह जब पियरे आया तो जैक ने उसे एक बेहद बुरी खबर सुनाई, "पियरे, आज सुबह जोज़फ सोकर ही नहीं उठा। वह बहुत बूढ़ा हो गया था। 25 साल की उम्र के घोड़े की वैसी हालत हो जाती है जैसे 75 साल के बूढ़े आदमी की होती है।"

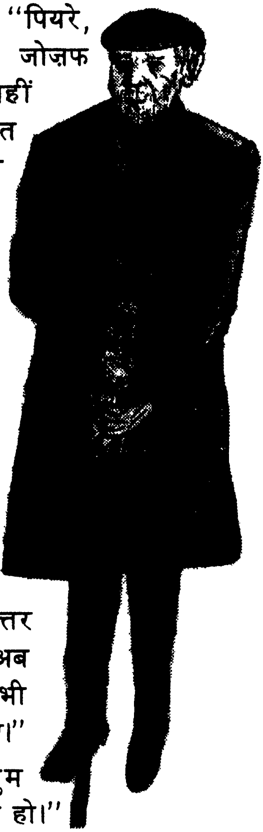

पियरे ने धीरे से कहा, "हां, मेरी उम्र भी अब पिचहत्तर साल की है। मैं अब जोज़फ को कभी नहीं देख पाऊंगा।"

"नहीं, तुम उसे देख सकते हो।" जैक ने दिलासा देते हुए कहा, "वह अभी अस्तबल में है और उसके चेहरे पर बड़ी शांति है। तुम जाकर उसे देख लो।"

पियरे घर लौटने के लिए वापस मुड़ा, "तुम समझोगे नहीं जैक।"

जैक ने उसका कंधा थपथपाया, "फिक्र न करो। हम तुम्हारे लिए जोज़फ जैसा ही एक और घोड़ा ढूंढ देंगे।

और महीने भर में तुम जोज़फ की तरह ही उसे भी पूरा रास्ता सिखा देना ...... है ..... न।

बरसों से पियरे एक मोटी टोपी पहनता था। टोपी से उसकी आंखें लगभग ढंक जाती थीं। अब जब जैक ने पियरे की आंखों में झांका तो वह सहम गया। उसे उन आंखों में एक निर्जीव-सा भाव दिखाई दिया। पियरे की आंखों में से उसके दिल का दर्द झलक रहा था। ऐसा लगता था जैसे उसका दिल रो रहा हो।

''आज छुट्टी ले लो पियरे।'' जैक ने कहा। परंतु पियरे उससे पहले ही घर वापस चल पड़ा था। अगर कोई उसके पास होता तो वह अवश्य ही पियरे की आंखों से लुढ़कते आंसू देखता और उसका सुबकना सुनता। पियरे एक कोना पार कर सीधा सड़क पर आ गया। उधर तेज़ी से आते ट्रक के ड्रायवर ने ज़ोर से हॉर्न बजाया और दबाकर ब्रेक लगाए परंतु पियरे को कुछ भी सुनाई नहीं दिया।

पांच मिनट बाद एम्बुलेंस आई। जांच करते ही डॉक्टर ने कहा, ''यह आदमी मर चुका है।''

तब तक जैक और दूध कंपनी के कई अन्य लोग वहां आ पहुंचे और उसके मृत शरीर को देखने लगे।

ट्रक ड्रायवर ने गुस्से में कहा, ''यह आदमी खुद-ब-खुद ट्रक के सामने आ गया। जैसे उसे दिखाई ही नहीं दे रहा हो। जैसे वह एकदम अंधा हो।''

एम्बुलेंस का डॉक्टर अब लाश की ओर झुका, ''अंधा! सचमुच यह आदमी तो अंधा था। ज़रा उसकी आंखों का मोतियाबिंद तो देखो? यह आदमी कम-से-कम पांच साल से अंधा होगा।'' फिर उसने जैक की तरफ मुड़कर कहा, ''तुम कहते हो कि यह आदमी तुम्हारे लिए काम करता था? तुम्हें नहीं मालूम कि वह अंधा था?''

''नहीं . . . नहीं।'' जैक ने धीमी आवाज़ में कहा, ''यह रहस्य हम में से किसी को नहीं पता था। सिर्फ उसके दोस्त जोज़फ को पता था। यह उन दोनों के बीच की बात थी। सिर्फ उन दोनों के बीच की।''

मूल कहानी: ए सीक्रेट बीटवीन टू फ्रेंड्स। **लेखक: क्वेंटीन रेनॉल्ड।**
अरविंद गुप्ता: शौकियातौर पर लेखन व अनुवाद का कार्य करते हैं। दिल्ली में रहते हैं।
चित्रांकन: वी. एम. भोंडे। शौकिया चित्रकार, होशंगाबाद में रहते हैं।

शुक्राणुओं का सफरनामा

डेम्सल फ्लाइ का अनोखा तरीका

के. आर. शर्मा

अगर आपको अपने बचपन के दिन याद हों तो नीचे दिए चित्र को देखकर यकायक आपके मुंह से बरबस हेलिकॉप्टर, चिड्डा या ऐसा ही कुछ नाम निकल पड़ेगा। इनमें से एक का नाम है – 'डेम्सल फ्लाइ' और दूसरे का नाम है 'ड्रेगन फ्लाइ'। बरसात के दिनों इनके पीछे भागते हुए उन दिनों हम इन दोनों में कोई फर्क नहीं कर पाते थे। यदि जीवविज्ञान की भाषा में कहें तो ये दोनों ही कीट समुदाय के सदस्य हैं।

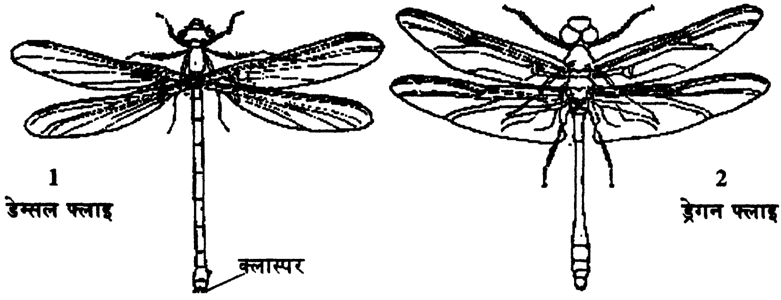

पहला चित्र डेम्सल फ्लाइ का है और दूसरा ड्रेगन फ्लाइ का। दोनों के पंख और दुमनुमा हिस्से देखने से इनमें फर्क समझ में आता है।

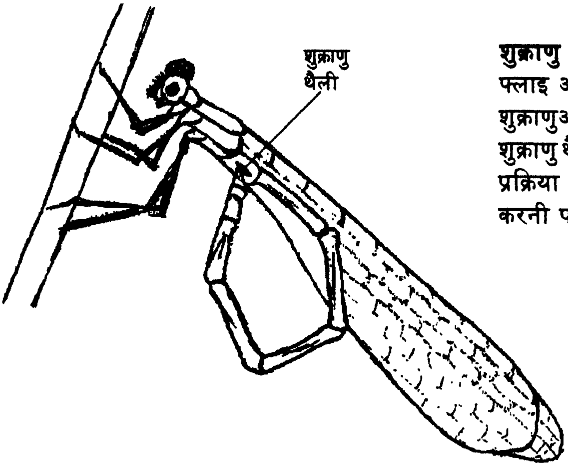

शुक्राणु का सफर: नर डेम्सल फ्लाइ अपने जनन छिद्र से शुक्राणुओं को निकालकर शुक्राणु थैली में रखते हुए। इस प्रक्रिया में उसे काफी सर्कस करनी पड़ती है।

डेम्सल का अर्थ होता है खूबसूरत, कमसीन किशोरी। यह कीट बला की खूबसूरती लिए होता है। इसीलिए इसका यह नाम पड़ा।

डेम्सल फ्लाइ का एक नातेदार है – ड्रेगन फ्लाइ। ड्रेगन का अर्थ है – दैत्य, राक्षस। तेज़ गति से उड़ना, झपट्टा मारकर शिकार को पकड़ना; तथा इसकी बड़ी-बड़ी संयुक्त आंखें इसके नाम को सार्थक करती हैं।

डेम्सल फ्लाइ का शरीर नाजुक-सा और पंख रंगीन होते हैं। जब यह किसी टहनी वगैरह पर बैठता है तो पंख शरीर से ऊपर उठे रहते हैं।

कीट समुदाय में डेम्सल फ्लाइ का समागम का तरीका काफी अनूठा है। नर डेम्सल फ्लाइ में पूंछनुमा रचना के आखरी सिरे पर नीचे की ओर एक जनन छिद्र होता है जहां से शुक्राणु बाहर निकलते हैं, लेकिन नर इस जनन छिद्र से शुक्राणुओं को मादा जनन छिद्र तक नहीं पहुंचाता। मादा से समागम के पहले नर डेम्सल फ्लाइ शुक्राणुओं को अपने शरीर के दूसरे और तीसरे खंड में पेट के पास बनी थैलीनुमा रचना में भंडार करके रख देता है। इस रचना को शुक्राणु थैली या शुक्राणु कोश कहा जा सकता है।

शुक्राणुओं को शुक्राणु थैली तक पहुंचाने के लिए नर डेम्सल फ्लाइ अपने शरीर के दुमनुमा हिस्से को (जहां जनन छिद्र है) इतना मोड़ता है कि जनन छिद्र शुक्राणु थैली (यानी शरीर के दूसरे-तीसरे खंड में) से जुड़ जाता है। फिर वह इसमें शुक्राणु छोड़ देता

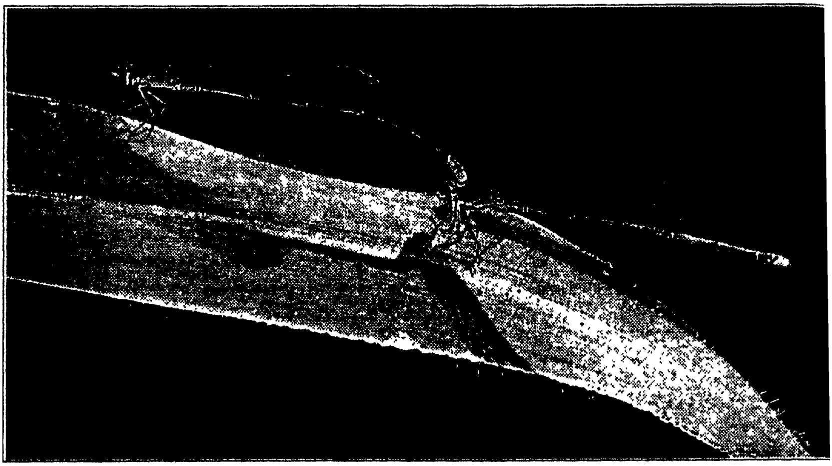

है। नर डेम्सल फ्लाइ के जनन छिद्र के पास एक नुकीली रचना होती है जिसे क्लास्पर (Clasper) कहते हैं।

अब नर मादा डेम्सल फ्लाइ की तलाश में निकल पड़ता है। जब मादा मिल जाती है तो नर क्लास्पर की मदद से मादा के सिर के पास के हिस्से को पकड़ लेता है।

जब मादा नर की पकड़ में आ जाती है तो अगला चरण शुरू होता है – शुक्राणुओं को मादा के जनन छिद्र तक पहुंचाना। मादा के शरीर में भी दुमदार हिस्से के आखिरी सिरे पर जनन छिद्र होता है। अब मादा अपने दुमनुमा हिस्से को मोड़कर नर की शुक्राणु थैली तक इस तरह ले जाती है कि उसका जनन छिद्र शुक्राणु थैली से जुड़ जाए। इस तरह शुक्राणु थैली से निकलकर मादा के जनन छिद्र में जाते हैं जहां वे अंडाणुओं को निषेचित (Fertilize) करते हैं। निषेचित अंडों को मादा पानी पर या पानी वाले पौधों के पानी में डूबे तनों पर देती है।

के. आर. शर्मा: एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से जुड़े हैं। उज्जैन में रहते हैं।

डेम्सल फ्लाइ का समागम: (ऊपर) नर डेम्सल फ्लाइ ने मादा को क्लास्पर की मदद से गिरफ्त में ले लिया है। (सामने) डेम्सल फ्लाइ के समागम को दिखाया गया है। मादा का दुमदार हिस्सा नर की शुक्राणु थैली से जुड़ा हुआ है। जब शुक्राणु अंडाणुओं के पास पहुंच जाएं तो नर-मादा जुदा हो जाते हैं।

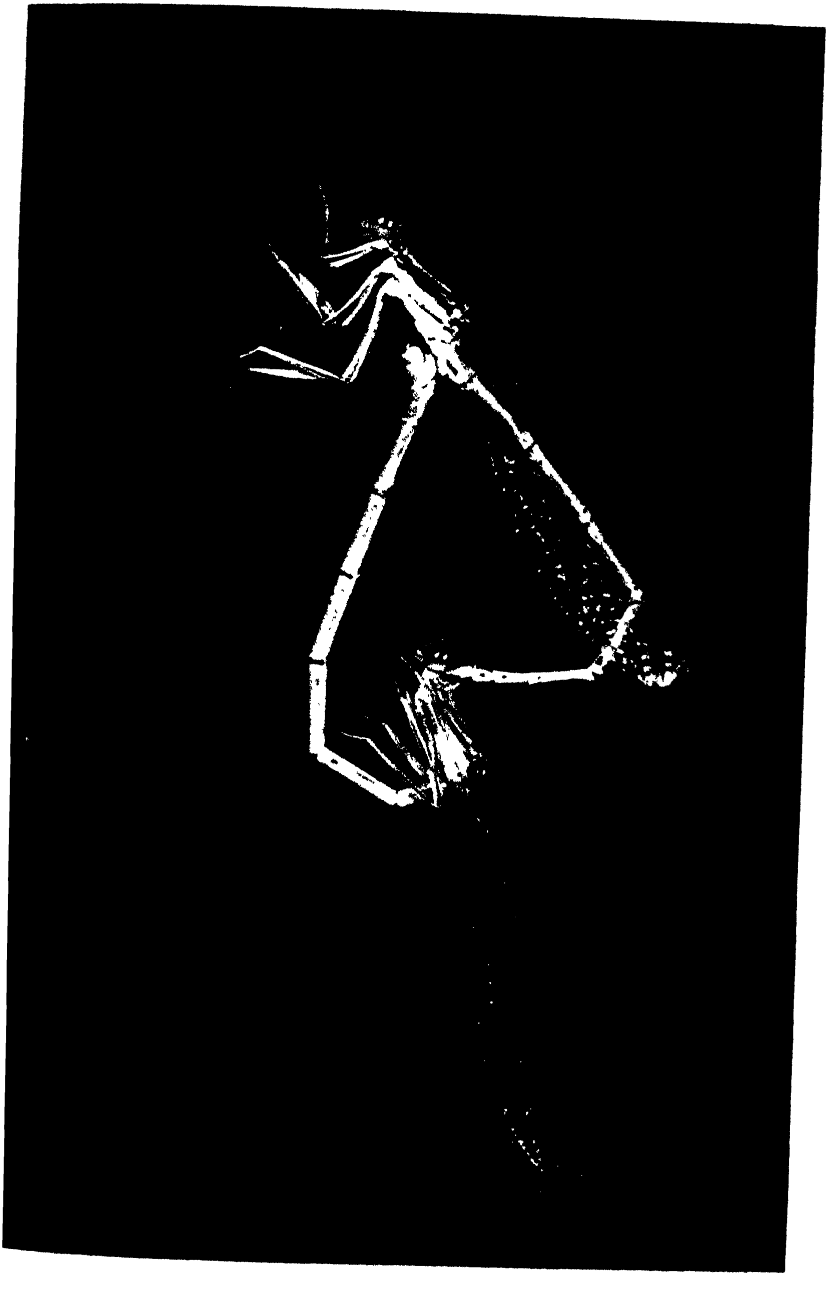

12763

एकलव्य की ओर से राजेश खिंदरी द्वारा भंडारी ऑफसेट प्रिंटर्स, ई-3/12, अरेरा कॉलोनी, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य ई-1/25 अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462016 से प्रकाशित। संपादक-राजेश खिंदरी